e-Souvenir
ई-स्मारिका

WIDER ASSOCIATION FOR VEDIC STUDIES

योऽनूचानः स नो महान्।
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः

WAVES

25th India Conference

The Concept of Liberty & Equality in the Vedic Perspective

वैदिक परिप्रेक्ष्य में स्वतन्त्रता एवं समानता की अवधारणा

ABSTRACTS OF PAPERS

ZOOM Cloud Meeting

25th India Conference of WAVES

The Concept of Liberty and Equality
in the Vedic Perspective
वैदिक परिप्रेक्ष्य में स्वतन्त्रता एवं समानता की अवधारणा

ABSTRACTS OF PAPERS

Edited by:
Prof. Shashi Tiwari
Dr. Aparna Dhir Khandelwal **Dr. Kamna Vimal Sharma**

December 10, 11 & 12, 2021
Timings: Evening 4.00 p.m. to 9.30 p.m.

Through:
ZOOM CLOUD MEETING

Organized by:
Wider Association for Vedic Studies (WAVES), India
&
Central Sanskrit University
Shri Raghunath Kirti Campus, Devprayag, Uttarakhand

25th India Conference of WAVES

Co-Coordinator:
PROF. BANAMALI BISWAL

Coordinator:
PROF. SHASHI TIWARI

Conference Organizing Committee:

1. Prof. Shashi Tiwari, Coordinator, President, WAVES (India) & Former Faculty, Sanskrit Dept., University of Delhi, Delhi—shashitiwari_2017@yahoo.com
2. Prof. Banamali Biswal, Co-Coordinator, Head, Vyakaran Vibhag, Central Sanskrit University, Shri Raghunath Kirti Campus, Devprayag, Uttrakhand—banamali7@gmail.com
3. Prof. Bhaskarnath Bhattacharyya, Vice-President, WAVES (India) & Director, School of Vedic Studies, Veda Bhawan, Rabindra Bharati University, Kolkata—jaymabnb@gmail.com
4. Shri Prashant Bhardwaj, Vice-President, WAVES (India), 844, Sector-12A, Panchkula, Haryana—grdprashant@gmail.com
5. Prof. Ranjit Behera, General Secretary, WAVES (India) & Faculty, Department of Sanskrit, University of Delhi, Delhi—ranjit1213@rediffmail.com
6. Dr. Aparna Dhir Khandelwal, Secretary, WAVES (India) & Faculty, Institute of Advanced Sciences, Dartmouth, MA, USA (Delhi)—dhir.aparna@gmail.com
7. Dr. KamnaVimal Sharma, Editor, WAVES (India) & Sanskrit, Daulat Ram College, University of Delhi, Delhi—kavi30sh@gmail.com
8. Dr. Shailendra Prasad Uniyal (Academic in charge), Head of Veda Department, CSU, SRKC—drshailendraprasaduniyal@gmail.com
9. Dr. Anil Kumar (Academic in charge), Sahitya Department, CSU, SRKC—anillbs.kumar@gmail.com
10. Shri Pankaj Kotiyal (Technical In charge), Computer Department, CSU, SRKC—kotiyalp@gmail.com
11. Shri Naveen Dobriyal (Technical In charge), Librarian CSU, SRKC-Dobriyalnav@gmail.com

Websites:

WAVES: www.waves-india.com
CSU, SRKC: http://csu-devprayag.edu.in/

सम्पादकीय वक्तव्य

ज्ञान की समग्र परंपरा के उद्भव और विकास में वेदों का महान् योगदान है। सर्वार्थसाधक वेद वह नगाधिराज है जिससे निकली ज्ञानविज्ञानमयी सरिताएं भारतीय मानस को संतृप्त करते हुई लोक-कल्याण में रत हैं। वेद समस्त विचारों के स्रोत हैं। अन्य प्रमाणों द्वारा अनधिकृत तत्त्वों का ज्ञान कराने से वेद की वेदता सिद्ध होती है। यही कारण है कि जब इस वर्ष, वेव्स के भारत सम्मेलन के लिए विषय-निर्धारण का प्रश्न उठा तो देश द्वारा मनाये जा रहे 'अमृत महोत्सव' को ध्यान में रख कर सर्वसम्मति से वैदिक परिप्रेक्ष्य में स्वतन्त्रता एवं समानता की अवधारणा पर विचार-विमर्श का मत बना। विद्वानों की यथोचित प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप शताधिक शोध-सारांश अधिगत हुए। यह पच्चीसवाँ सम्मेलन एक बहु-आयामी विषय पर आधुनिक सन्दर्भ में विवेचन का अवसर प्रदान करने से वेव्स संस्था के लिए विशेष महत्त्व का है।

सम्मेलन के अवसर पर लोकार्पित की जाने वाली प्रस्तुत स्मारिका में चयनित और निमन्त्रित अस्सी सारांशों का सम्पादनपूर्वक प्रकाशन किया गया है। विद्वान् प्रतिभागियों ने मुख्य विषय से सम्बद्ध अन्य विषयों पर भी चिन्तन किया है, जैसे–अभय, स्वराज्य, मातृभूमि, राष्ट्रप्रेम, राजा का चयन, समानता, एकात्मता, समभाव, मैत्री-भावना, समाजवाद, प्रजातन्त्र, विषमता, कर्म की स्वतंत्रता, मानवाधिकार। इसी को और विस्तृत करते हुए वे उसके सांस्कृतिक और दार्शनिक पक्ष पर भी विमर्श करते हैं। फलतः जीवन, जीव, कर्मसिद्धांत, मुक्ति, मोक्ष, कर्म-बंधन सदृश श्रुतिसम्मत विषयों का आकलन संभव हो सका है। स्वतन्त्रता की परिकल्पना तभी होगी जब कोई बन्धन होगा। अभय की बात तभी होगी जब भय होगा। अभय भयराहित्य है, निर्भयता नहीं है। जिस तरह सब कुछ अपने हाथ में होना स्वतंत्रता नहीं है। एक मर्यादित आचरण के बिना सभी अपूर्ण हैं। वैदिक ऋषि जब अभय की कामना करते हैं तब वे समझते हैं कि यह स्वतंत्रता का मनोवैज्ञानिक आधार है। सर्वविध अभय की देवों से की गई प्रार्थनाएँ स्पष्ट करती हैं कि वैदिक आर्यों ने स्वतंत्रता का विचार अर्जित कर लिया था। उन्होंने इस विषय को मात्र व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक सीमित नहीं रखा अपितु अप्रत्यक्षतया राष्ट्र से जोड़ दिया। उनका अभीप्सित 'अभय' ही स्वतंत्रता का मूल है।

आशा है, सम्मेलन में हुए विचार-विमर्श के स्थाई और दूरगामी परिणाम होंगे एवं सभी प्रतिभागी इन से लाभान्वित हो सकेंगे। सच है कि ऐसे ऑनलाइन आयोजन प्रभाव को किंचित् शिथिल बना देते हैं परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि वेव्स के अनुभवी प्रतिभागी अपनी विद्वत्ता तथा शैली के कारण सम्मेलन के उद्देश्य को द्विगुणित कर देते हैं।

इस आयोजन में हमारी सहयोगी हैं–केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, श्री रघुनाथ कीर्ति परिसर की शुभेच्छाएँ। इस विश्वविद्यालय के आयोजकवर्ग के सभी सदस्य बंधुवर हमारे धन्यवाद के पात्र हैं, विशेषकर प्रोफेसर बनमाली विश्वाल जी, जिन्होंने यथासमय सहायता देकर हर कार्य को सहज और सरल बना दिया। वेव्स के निमन्त्रण पर मुख्य अतिथि, विशिष्ट अतिथि, सारस्वत अतिथि, मुख्य वक्ता के रूप में पधारे विद्वानों के प्रति हम कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। वेव्स की कार्यकारिणी के सदस्यों, सहयोगी छात्र-छात्राओं एवं देश-विदेश से आने वाले प्रतिभागी विद्वानों के हम विशेष आभारी हैं जिन्होंने भरपूर सहयोग प्रदान किया। सम्मेलन की सफलता की शुभकामनाओं के साथ आप सबका स्वागत और अभिनंदन!

प्रो. शशि तिवारी,
अध्यक्ष, वेव्स
(वाईडर एसोसिएशन फॉर वैदिक स्टडीज़)
समन्वयक, 25वाँ भारत सम्मेलन।

प्रो. बनमाली बिश्वालः
आचार्यः व्याकरणविभागाध्यक्षश्च
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
श्री–रघुनाथ–कीर्ति–परिसरः
देवप्रयागः, पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्डः)–२४६३०१
(संसदः अधिनियमेन स्थापितः)
भारत सर्वकारस्य शिक्षामन्त्रालयाधीनः
banamali7@gmail.com ९४५०७८१७४२

PROF. BANAMALI BISWAL
Professor and Head of Vyakaran Department
Central Sanskrit University
Shri Raghunath Kirti Campus
Devaprayag, Pauri Garhwal Uttarakhand-249301
(Established by an Act of Parliament)
Under Ministry of Education, Govt. of India
banamali7@gmail.com 9450781742

समाशंसाः

प्रसिद्धो व्यापकस्सङ्घो वैदिकाध्ययनस्य वै। समर्पितोस्ति शोधाय वैदिकाय विशेषतः।1।
विश्वविद्यालयस्यांशः केन्द्रीयस्य विनूतनः। श्रीरघुनाथकीर्त्याख्यः परिसरः प्रतिष्ठितः।2।
तयोरेवानुकुल्येन दिनत्रयात्मकं नवम। तच्चान्ताराष्ट्रियं भव्यं सम्मेलनं सुनिश्चितम्।3।
मासे दिसम्बरे चास्मिन् दिनाङ्काद्दशमात् पुनः। द्वादशान्तं दिनाङ्कञ्च सम्मेलनं प्रवर्तते।4।
पञ्चसप्ततिवर्षेस्मिन् स्वतन्त्रभारतस्य वै। आराष्ट्रं पाल्यते चायममृताख्यो महोत्सवः।5।
सुधामये च वर्षेस्मिन् सर्वं शुभमयं यतः। सम्मेलनस्य महत्त्वं द्विगुणितं न संशयः।6।
पञ्चविंश–प्रसूने च भारतीयाङ्कते शुभे। चर्चिष्यन्ते च तत्त्वानि तथ्यानि वैदिकानि वै।7।
समानता–महत्त्वञ्च वेदेस्ति प्रतिपादितम्। प्रसिद्धा तत्र सूक्तिश्च समाना हृदयानि वः।8।
सन्त्यवधारणा याश्च स्वतन्त्रता–प्रसङ्गतः। ताश्च विचारयिष्यन्ते परिप्रेक्ष्ये च वैदिके।9।
वैदिक–पृष्ठभूमौ च साहित्ये च पुरातने। स्वरूपं यादृशञ्चास्ति साम्य–स्वातन्त्र्ययोः पुनः।10।
अभयं वा स्वराज्यं वा मातृभूमिर्भवेत्पुनः। राष्ट्रप्रेमास्तु राज्ञो वा चयनञ्च भवेत् क्वचित्।11।
भवेतां मुक्तिमोक्षौ वा कर्मबन्धनमेव वा। भक्ति–समानते स्याताञ्चौकात्म्यं समभावना।12।
मैत्र्याश्च भावना वोस्तु समाजवाद एव वा। भवेदार्थिकवैषम्यं प्रजातन्त्रं भवेत् पुनः।13।
स्वतन्त्रता विचाराणां कर्मणां वा भवेत् क्वचित्। भिन्नानामधिकाराणां मानवानां प्रसङ्गतः।14।
तेषां निरीक्षणं कृत्वा तथ्य–सन्दर्भ–पूर्वकम्। व्याख्यास्यते च सत्रेषु विद्वद्भिश्च यथामति।15।
आलोचयिष्यते चात्र सम्यक् संस्कृत–वाङ्मयम्। वैदिकं लौकिकं सर्वं वेदैर्यत्तु समर्थितम्।16।
एवं हि वेदविद्याया समृद्धिश्च भवेत् क्वचित्। तथा बुद्धिविलासोपि विदुषाञ्च भवेत् पुनः।17।
सर्वेषां शोधपत्राणां सारास्सङ्कलितास्समे। सम्पादिताश्च ते सर्वे पुस्तिकायां प्रकाशिताः।18।
विद्वत्सम्माननञ्चात्र प्रस्तावितञ्च संस्थया। तथा कार्यक्रमाश्चान्ये प्रस्तावितः प्रसङ्गतः।19।
तदर्थमभिनन्द्यन्ते चायोजकास्समे मया। प्रत्यक्षं वा परोक्षं वा येषां सहायताः पुनः।20।
सफलञ्च भवेदेतत् सम्मेलनञ्च वैदिकम्। तदर्थं मे शुभाशंसाः विलसन्तुतमां क्वचित्।21।

प्रो. वनमाली विश्वाल

प्रो. बनमाली बिश्वालः
आचार्यः व्याकरणविभागाध्यक्षश्च
केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
श्री–रघुनाथ–कीर्ति–परिसरः
देवप्रयागः, पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्डः)–२४६३०१
(संसदः अधिनियमेन स्थापितः)
भारत सर्वकारस्य शिक्षामन्त्रालयाधीनः
banamali7@gmail.com ९४५०७८१७४२

PROF. BANAMALI BISWAL
Professor and Head of Vyakaran Department
Central Sanskrit University
Shri Raghunath Kirti Campus
Devaprayag, Pauri Garhwal Uttarakhand-249301
(Established by an Act of Parliament)
Under Ministry of Education, Govt. of India
banamali7@gmail.com 9450781742

Message

It gives me great pleasure to state that the 25th INDIA CONFERENCE OF WAVES is being Organized by Wider Association for Vedic Studies (WAVES), a Multidisciplinary Registered Academic Society in collaboration with Central Sanskrit University, Shri Raghunath Kirti Campus, Devaprayag, Uttarakhand through Zoom Cloud Meeting from 10th to 12th December, 2021. The earlier sessions of the conference were held in New Delhi, Shrisailam, Bangalore, Pondicherry, Jaipur, Hyderabad, Vrindavan, Haridwar, Lucknow, and Varanasi. Belonging to the auspicious period of 75th independence year of India called अमृतमहोत्सव the present format of Conference is based on an important topic, namely, "The Concept of Liberty and Equality in Vedic Perspective" (वैदिक परिप्रेक्ष्य में स्वतन्त्रता एवं समानता की अवधारणा). Thus, this conference aims at discussing various aspects of liberty (freedom) and equality (unanimity) among all the living beings covering the sub-topics related to family, society, kingdom, king, nation, patriotism, economics, education, culture, religion, philosophy, devotion, liberation etc. as reflected in Vedas as well as Vedic literature along with all sorts of Sanskrit literature supported by Vedic thoughts, ideas and concepts.

As I could know from the First as well as the Second Announcement of the Conference announced on 1st October and 1st December 2021 respectively, the present conference will consist of several enriched sessions, such as Inaugural session, Panel discussions, Plenary sessions, Keynote and Valedictory sessions etc. The conference has plethora of participation from India and abroad. Not only established learned faculties, but budding research scholars and University students will also be participating online in a large scale. In addition to that, WAVES-Award-Ceremony will also be an important part of this Conference. On this very occasion WAVES is publishing the E-souvenir containing abstracts of the research papers to be presented in different sessions and the same will be released during the inaugural session of the conference.

I would like to share my thanks best wishes to the Conference Organizing Committee of both the institutes in general and Prof. Shashi Tiwari, the Coordinator of this conference and the President of WAVES in particular. I wish a great success of this mega academic event in the form of 3-days International Virtual Vedic Conference.

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः–

Prof. Banamali Biswal

1st Lifetime Achievement Awards of WAVES to Dr. S. Kalyanaraman & Dr. Calyam Prabhakar

Dr. S. Kalyanaraman

Dr. S. Kalyanaraman, is Director, Sarasvati Research Centre engaged in civilization studies for over 40 decades. He has a Ph.D. in Public Administration from the University of the Philippines and D.Litt. from Deccan College, Pune Deemed University. He has retired as a Senior Executive of Asian Development Bank after serving there from 1978 to 1995 and on Indian Railways Accounts Services (IRAS) from 1962 and took voluntary retirement to pursue his Indian Civilization research interests.

Significance of the Life-time work

He has contributed over 2000 monographs on academia.education and published 26 books including titles: Sarasvati Civilization, Rama Setu (Adam's Bridge), Indian Lexicon (comparative semantic dictionary of over 25 ancient Indian languages), Epigraphia Indus Script in 3 volumes, Wealth Accounting for a Nation–Indus Writing. His main focus of research is on Sarasvati (Indus) Civilization, economic history, script, language and Vedic studies. He is also active promoting the formation of Indian Ocean Community, National Water Grid and protection of heritage monuments. Dr. Kalyanaraman's pioneering work has completely rewritten the ancient economic history, formation and evolution of Indian languages and polity of the great Indian Civilization.

Dr. Calyam Prabhakar

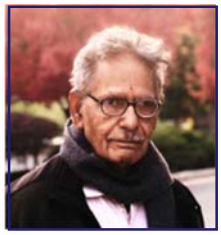

Dr. C.L. Prabhakar was born in Tadipatri, a temple town in Andhra Pradesh .He has a science degree and postgraduate degree in Sanskrit from Karnatak University, Dharwar and a PhD. degree in Vedic Studies (Shukla Yajurveda). He was previously accorded the honor of *Vedavaridhi*, by Dharma Paripalana Sabha, Bangalore. He retired as a Professor of Sanskrit in 2000. He is a visiting Professor of the Hindu University of America (HUA), Orlando USA. He has been the Chief Editor of the Annual Souvenirs of NVAK by name *VedaGanga* and Editor of the Monthly Bulletin of the NVAK by name *VedaNadaSarit.*

Significance of the Life-time work

In 1994, he founded Nada Vedaadhyayana Kendra (NVAK), in Bangalore to impart knowledge, training and recitation of Veda mantras. In 1998, Prof. Prabhakar inaugurated the Bangalore Chapter of WAVES. Ever since, the spirit, culture, and academics of Vedas, *Sangita* and the *Sanatana Dharma* programs have been held by him under the banner of WAVES and NVAK. He has many publications in the form of Articles and Books on various disciplines of Veda, Nada, Epics and Classical Sanskrit.The metrics in the outcomes of these activities are spectacular–hundreds of talks organized, thousands of chanting and singing lessons taught, hundreds of community events organized, thousands of students engaged, thousands of pages of monthly newsletters and annual journals released, and the list goes on and on.

Summary of Keynote Speech

The Concept of Liberty and Equality in Vedic Perspective

The word liberty is a bit tricky to use in Vedic parlance. It is not exactly *swatantrata*, but could be closure to *sweksha*. It is different from freedom which is one of the features of all that is *vyakta* (expressed) in the entire universe, be it material or the man. The material world is expanding entropically since its origin, starting with the big bang to free the energy and material over time and distance. Material world in short time range disintegrates for freedom into molecules, atoms, or subatomic particles, which subsequently associate in various combinations. Humans on the other hand are defined as intelligent beings, and thus express themselves intelligently through language, art, dress, food habits, and ideas, including philosophies or *darshanas* in case of the Dharmic/Vedic traditions.

The Vedic concept of living in the moment implies that one could see changes from moment to moment. A human being needs to train himself or herself to realize oneself from moment to moment, in a detached and unbiased manner. The knowledge of self provides the freedom to act according to one's nature, and one also develops capacity to accept the consequences without fear, anxiety, or stress. Thus, it is the knowledge of self that needs to be promoted through Yoga and meditation. *Sweksha* on the other hand suggests a link to the desire, which could limit one's freedom. Equality is possible only when one is free, *sweksha* can bind people to different things, and may in fact lead to inequality in approaching things in this world. Equality can be attained by realizing *swadharma* by *swadhyay*, not as a right as is being touted these days in political circles.

Vedas emphasize on duties, and when the karma is performed as one's duty, all appropriate rights are secured through the understanding of its *phala* or consequences. Demanding equal rights was necessitated because of the colonial concept of exploitation that comes from biblical concept of chosen people, faith based salvation through religion, and the suppression and torture of beings in the name of God. Equality is attained when one establishes oneself in the self for an equally attained mental and physical health. Freedom of being oneself, freedom of expression, freedom of senses, and freedom of action are the practices that Vedic traditions promote, and that provides freedom of karma which provides *karmaphala* equally without any discrimination.

Professor Bal Ram Singh
Professor and President, School of Indic Studies,
Institute of Advanced Sciences, Dartmouth, MA 02747

Index

I-ENGLISH ABSTRACTS

- Ajil Kumar N.S.
- Anirban Chakraborty
- Asha Rani Tripathi
- Bhagyalakshmi K
- Bhupesh Rathore
- Brig. J.S. Rajpurohit & J. Satpathy
- C.L. Prabhakar
- Chandra Prakash Trivedi
- Charan J.S. Manektala
- Chhavi Arora
- Dhiraj Shukla
- Drusya C.S.
- Govind M.N.
- Jayant Balaji Athavale & Sean
- Kalindi Shukla
- Kamna Vimal Sharma
- Koenraad Elst
- Lakshmi Vinayankumar
- Mitali Goswami
- Munmun Chakraborty
- Pallabi Dutta
- Raghava Boddupalli
- Raghul Reghu
- Raj Verma Sinha
- Ram Gopal
- Rati Hegde
- Ravi Prakash Gorthi
- Rupsmita Buzarbaruah
- Rutam Biswal
- Sanghamitra Mukherjee
- Sanjeev Prasad
- Sati Shankar
- Saumya Kanti Biswas
- Srabani Maharana
- Subramanian Chidambaran
- Swathy M.S.
- T. Seetha Rama Lakshmi
- T.V. Gopal

II-HINDI ABSTRACTS

- Ajay Kumar Jha
- Anju Seth
- Aparna Dhir Khandelwal
- Archana Dubey
- Aruna Shukla
- Asha Lata Pandey
- Binod Kumar Tiwari
- Chandra Shekhar Upadhyaya
- Chiranjit Sarkar
- Dinesh Chandra Shastri
- Divya Rana
- Homeswar Upadhyaya
- Kajal Oraon
- Khushboo Kumari
- Krishnakanta Sarkar
- Madhav Gopal
- Mani Mala Kumari
- Meena Kumari
- Nandita Singhvi
- Neelam Gaur
- Nirupamatripathi
- Nishi Arora
- Prasun Kumar Mishra
- Pratibha Shukla
- Pushpa Yadav
- Sangeeta Kumari
- Shalini Mishra
- Shashi Tiwari
- Shruti Rai
- Shubham Kumar Pandey
- Shwet Ketu Sharma
- Supriya Sanju
- Tushar Mukherjee
- Vashishth Bahuguna
- Yogesh Sharma

III-SANSKRIT ABSTRACTS

- D. Venugopala Rao
- Harischandra Hota
- Kamla bhardwaj
- Loopamudra Goswami
- Namya Lakshmi R
- Paramba Shree Yogamaya
- Sipra Ray

ENGLISH ABSTRACTS

1

Intellectual Freedom in Ancient India

Ajil Kumar N.S.
BA Sanskrit Student, Sree Sankara College, Kalady, Kerala
ajilkumar48@gmail.com

Intellectual freedom is the right to freedom of thought and of expression of thought. As defined by Article 19 of the universal declaration of human rights. It is a human right. Article 19 states "Everyone has the right to freedom of opinion and expression; this right includes freedom to hold opinions without interference and to seek, receive and impart information and ideas though any media and regardless of frontiers. Intellectual freedom can be categorised into (1) Freedom to not believe something without evidence (2) Freedom to not oppose something without experience. The Vedas says on intellectual freedom is 'combining the two things—Indra's obsession with getting rid of anything that obstructs a free flow and the importance of diversity in thoughts and actions. We get a very rudimentary idea of freedom in the Rigveda as the 'Right to thought and the right to action'. Hinduism says about the freedom from five—violence (*ahimsa*), want (*asteya*), exploitation (*aparigraha*), violation or dishonour (*avyabhichara*) and from early death and disease (*armitatva* and *arogya*). Human development is the most important factor of welfare improvement where the freedom is an essential instrument to archive it. The purpose of this paper is to investigate freedom concept in different ideas and emphasize the role of freedom to access human development.

2

The System of Government in the Light of the Vedic Literature and Its Present Relevance: A Study

Anirban Chakraborty
Assi. Prof., Sanskrit, Udaynarayanpur Madhabilata Mahavidyalaya, Howrah, West Bengal
anirbanc153@gmail.com

The Vedas are the source of Hindu culture, the pinnacle of Aryan civilization. World-renowned Indian philosophies are embaded in the Vedas. Veda is the eternal accumulation of Hinduism, the motivation of its action, the radiance of its consciousness. Along with spiritual theories, various images of the social system of the time have been reflected in Vedic literature. We find the election of the king of that period, the duties of the monarchy, the composition of the cabinet, the finances, and the policy of taxation in the Vedic literature. When discussing the system of administration of the modern state, it is seen that the Vedic system has been followed either directly or indirectly. In the nineteenth chapter of the Atharvaveda, the word 'states' and 'country' are mentioned. The application of the plural to the word state is evident from the fact that there were many states at that time. Although details about the names and sizes of those states are not available—*'नक्षत्रमुल्काभिहिं शमस्तु नः शं नोभिचाराः शमु सन्तु कृत्याः। शं नो निखाता वल्गाः शमुल्का देशोपसर्गाः शमु नो भवन्तु।।* (AV 19.9.9) Here, the word *'देशोपसर्गाः'* is used to pray for protection from future crises and natural calamities in the country. The modern system of administration still follows the ancient electoral policy. In this paper, I would like to describe the system of government described in Vedic literature and its present relevance.

3

Notion of Liberty and Equality in Isha Upanishad

Dr. (Mrs.) Asha Rani Tripathi
Formerly Head of the Sanskrit, Sankardev College, North-Eastern Hill University, Shillong
ashatripathi12@yahoo.com

The two words "liberty" and "equality" are complementary to each other. In order to maintain good health of society it becomes obligatory to assert the right of individuals so that they may lead a free life. Only equality can provide freedom but for providing freedom and equality certain parameters have to be followed. Ish Upanishad has propagated the theory of *karma* for regulating equality among members of society. God has no power to grant a desirable life to anyone. An individual has to observe the *karmas* carried out by a particular person. It is *karma* which is regarded as bringing equality among common beings. The fruits of *karma* make a man independent and grants harmonious life to all.

4

The Concept of Freedom in Vedic Literature

Bhagyalakshmi K.
BA Sanskrit student, Sree Sankara College, Kalady. Kerala
bhagyameenammal@gmail.com

The Universal Declaration of Human Rights (UDHR), which affirms the dignity and rights of all human beings, is in accordance with and affirmation of the dignity, duties and rights mentioned in the ancient Vedic literature. Today, the Constitution of India partakes a chief role in ensuring the freedom of every member of society invariable of caste, creed, creed, color or gender. The Right to Freedom (Act 19) is one of the Fundamental Rights guaranteed by the Constitution of India. The manuscript seeks to decode the human rights principles hidden in the Scriptures.

The concept of '*Dharma*' played a dominant role in giving equal justice and just freedom to all human beings in the Vedic period. The Brihadaranyak Upanishad declares *Dharma* to be paramount, and when strengthened by the strong power of the king, it enables the weak to overcome the strong (1.4.14). The Mahabharata (Anusasanaparva 61.32-33) calls on the people to revolt against the tyrannical dictator and oppressor of the king. Traditional Vedic solutions to problems related to the political and social spheres surrounding the concept of the Vedic monarchy. The Vedic king was a sovereign, but not a dictator, and there were many checks and balances in place to prevent him from becoming a dictator. The secularism in the Vedic scriptures is conducive to the fair conduct of state affairs by keeping in mind the welfare of the people without any discrimination.

5

Vedic Literature and Legal Education: Resonance and Dissonance

Dr. Bhupesh Rathore
Assistant Professor, Faculty of Law, Law Center II, University of Delhi, Delhi
radhika.babra30@gmail.com

Law and legal education have roots in normative understandings of custom and contract in legal philosophy. Legal education and law schools are often influenced by disseminating legal information and conducting 'legality' itself, using past sources such as Vedic scriptures and other religious books. This paper aims to study the role of Vedic literature in the legal education system in India, owing to the institutional and disciplinary roots that the latter inherits from the former. Using qualitative analysis, secondary data and literature have been analyzed, and an assessment of secondary content

from various sources such as journals, news articles, websites, social blogs, books, published and unpublished manuscripts has been undertaken. The study explores the complex ways in which ancient Vedic literature and contemporary legal frameworks, including its dissemination in the form of education, intersect at various vital nodes, such as the level of acceptance of universal human and civil rights based on citizenship.

How different facets of present-day legal education diverge from the normative understandings and ideals in Vedic literature has also been studied. Thus, the paper provides a holistic experience of the dissonances and the resonances that Vedic literature has with modern-day legal education. Manuscripts and other archaic secondary sources have also been analyzed to gauge the extent to which modern legal systems accept Vedic legalism at a philosophical, infrastructural, and ideological level. Study also tried to find out the areas where legal education differs from or has discarded specific values which are no longer coherent to the existing ideals of the contemporary Indian State. The paper attempts to form linkages between the relic and the new and the multiple ways in which both intersect at essential junctures of legalism in India.

6

Contentment Beyond Contours of Consciousness

Brig (Dr.) J.S. Rajpurohit
Ex-Head of Behavioural Sciences, College of Defence Management, India
&
Col. Prof. (Dr.) J. Satpathy
Prof., Srinivas University & Visiting Professor, Management University of Africa, Kenya
jsr1989@gmail.com

Currently, human resources are under colossal pressure to ascertain their value, facing severe demands to create an innovative, result-oriented workforce. Personal or professional engagement of individuals will have a long-lasting effect on the environment. Human behaviour has shades of both contentment and discontentment, leading to love and hate relationships. The material world with consumerism, profit, economic greed and a cut-throat mindset affects humans in significant proportions and dimensions. Each situation brings in specific thoughts that give a sense of fulfilment or create a gap or vacuum. These judgements create emotions that impact individual behaviour. The behaviour affects the surrounding environment and society, leading to feelings that enthuse contentment or otherwise. The world perceives contentment uniquely, and there is no empiricism to prove or disprove the all-pervasive mindset. How does the mind even reach a state of equilibrium with no registered primary or secondary experiences and conclusive evidence?

Mindfulness connects the conscious inner self with the universality or the ultimate existence of life on the planet or maybe with the entire spectrum of life in the universe. The mind continues to be connected to the universal truth mired by the pleasures and pains of life. Equilibrium within oneself through balancing the *Triguṇa* traits of *Sattva*, *Rajas* and *Tamas* may provide an insight into the understanding of personal feelings and emotions.

Are all these experiences related to consciousness? Is there a way to free oneself from negative feelings and emotions? Can you be never affected or bothered by worldly pains to always remain in a state of bliss and contentment? Recent research on psychological well-being has identified the psychosocial dynamics of human contentment.

The purpose of the paper is to find the intertwining seismic between engagement as a calling, self-efficacy, emotional intelligence, resilience, and optimistic explanatory style to find the answer to what happens if engagement is considered not just a means of earning money.

This paper will attempt to discuss contentment in the domain of consciousness and how can it transcend to the higher levels of unconsciousness that will enable humans to achieve contentment beyond the contours of consciousness.

7

Views on the Concept of Liberty and Equality in Veda

Dr. C.L. Prabhakar
President, WAVES. Bangalore Chapter & Director, Nadaveda Adhyayana Kendra, Bangalore
clprabhakar@gmail.com

Vedas are generic for many positive concepts, solutions for problems human and divine and more. The instruction is: one must aspire to live full years of life with greater percentage of happiness couched with the licenses, liberty, and equanimity and more, in positive way with a spiritual tinge. Health would also be sound. Yajurveda exhorts a prayer to Rudra Bhagavan thus, '*sugam ca me sayanam ca me susha came Yajnenena kalpantam'*. This is accomplishable through divine grace and human endeavors with positivity and confidence. Every being born is free. He has liberty and equanimity in the society to achieve heights and practice rights. Liberty and Equanimity are age old features enjoyed by people. Circumstances and behavior, character and conduct, contexts etc., make them vary. This paper would cite a few *sūkta*s from RV and YV to express that the Vedic seers always offered the advantages of the blessed features to mankind and constantly encouraged them to check, mend and adopt principles of value, validations and lifestyles in respect of food habits, professional excellences.

Readily we have the *Aikamatya sūkta* (RV 10.190.1-4). Its contents indicate what a human being is possessing and various assets in the form of liberty, equanimity with a goal for peace and prosperity—'*samgacchadhvam, samvadadhvam, sam vo manamsi Janatam, samitih samaani, samanam mantrah, samanam manah, sahacittam, samanee aakutih, samani hrudayani, samanamastu vo* manah'. In this instruction spree, the *sūkta* mentions the gods to be our models whose nature and behavior which is filled with liberty and equanimity.

In addition to this some more mantras are cited in the paper to illustrate that from the Vedic perspective these two features are the birth rights which must be guarded, understood, and practiced so that life on Earth would be a joy and peace.

8

Veda are the First Word of Civilized Person on the Earth

Prof. Chandra P. Trivedi
Former Principal, Govt. Post Graduate College, Bhind, M.P.
&
Former Senior Fellow, Department of Culture, Govt. of India,
atcptrivedi@gmail.com

'Heaven is your Sire, your Mother Earth, Soma magnetic energy your Brother, Aditi Nature your Sister; seeing all, unseen, keep still and dwell ye happily' (RV 1.191.6). The Creation has evolved from fundamental energy, under the laws of thermodynamics. Einstein's equation $E=Mc^2$. The fundamental energy is working with its dualistic force Phonon and Photon. The phonon is immortal and the photon undergoes synthesis and degradation with time. The immortal phonon has created the Aditi Nature and held up all existing life. Aditi is heaven, Aditi is mid-air, Aditi is the mother the Sire and son. Aditi is all Gods, Aditi five classed men, Aditi all that has been and shall be born (RV 1.89.10). Life has evolved from single DNA with genetic recombination and cell division. Life is the trinity of three immortals. DNA A body formed for flight hast thou, O charger; swift as the wind in motion is thy spirit.

Thy horns are spread abroad in all directions: they move with the restless beat in wildernesses (RV 1.163.11). Sun is the Soul and eye of the Creation (RV 1.115.1). Earth is one Family Life is One, Veda emphasized liberty and equality for all existence.

9

Seeding Liberation Within and Equality Among Us: Vedas

Charan JS Manektala
Bloomington, Indiana, USA
dean.cjs@gmail.com

At its core, Vedic wisdom blossoms within us a sense of fulfillment, because it seeds liberation within and equality among us. Liberty is the state of being free from control or restrictions, while liberation is the act of setting someone free. Following Vedic wisdom, one achieves liberation within, and thus while still living in a social framework, one experiences freedom from its control and restrictions. Vedic wisdom alerts us of our nature (*Svabhav*), informs us of our gifts of *Para Prakriti*, a higher dimension of our nature, and our abilities to overcome the intrinsic tendencies or *Apara Prakriti*. Perform work, Ishavasya Upanishad guides us as there is no escape from it, but let the work not cling (*Lipyate*) to you, which in turn will seed liberation within you. Ishavasya Upanishad then takes us a step further, by asserting, "he alone sees, who sees all beings and forms in self, and sees self in all beings thereafter", and thus seeds equality among us.

Having experienced such, one is filled with the sense of fulfillment, as if senses (*Indriya*) have withdrawn from its pursuits, as if its intrinsic nature (*Svabhav*) has been dullened. Author shall explore *Ṛśi*'s original intent to facilitate liberation from any intrinsic or interactive domains and promote equality at the level of social rights, status, and opportunities. Author shall further assert that Vedic wisdom emphasizes that everyone is born with an equal potential, equipped with what he or she needs, and that upon *tapa*s and austerities he or she realizes the state of being free. This paper shall refer to Ishavasya, Taittiriya, Aitareya and Katha Upanishads. It may highlight select verses from Bhagavad Geeta. It shall attempt to establish continuity and validity of thought leadership by citing select scientific research articles.

10

Mapping Value of Education (VoE), Intricately Linked to the Values of Vedic Essence with New Normal Mentorship

Chhavi Arora
MFA, College of Fine Arts, Gurugram
chhavi.marwaha@gmail.com

The Success of a mentoring program rests on the shoulders of an experienced and motivated Mentor. Proper mentorship program skills must be developed or inculcated while mentoring the mentee. The glory or beauty of a relationship can only be achieved if it is equally shared with the mentee, this helps in strengthening the respect of the relation. National Education Policy 2020 has focussed on 'Strengthening Holistic and Value Based Education' for all.

According to the demand of the Education Industry, this paper reflects the comparative of the last two National Education Policies to bring out the best evaluation of the same. The objective of this paper is to evaluate a need of a Value based Education System as it was there in our epic Mahabharata wherein *shishya* excels its talent before he leaves his *gurukul*, his mentor, with a remarkable growth of talent in his personality. In the relationship of a mentor and disciple there should be faith mutually to comprehend the variety of difficulties in their journey, which helps them to grow and shape them into better individuals.

Mahabharata contains values and ideas which could become the basis for Sound Educational Philosophy.

11
Emphasis on the Communication in Vedic Literature

Dr. Dhiraj Shukla
Assistant Professor and In-charge H.O.D., Journalism,
Uttarakhand Sanskrit University, Haridwar
dhirajs2008@gmail.com

Communication is an essential part of bringing people closer and making better understanding among them. People and society need to express their views and thoughts. Communication is a natural phenomenon. In modern era no entity can sustain without communication. Members of the society are interdependent for their needs. Modern communication scholars have identified the role of communication specifically mass communication to inform, educate and empower people. Modern democracies give guaranty to its citizens for freedom of expression and thoughts. Indian constitution also gives the freedom of speech and expression under Article 19(1)(a) to its citizens. It is a fundamental right. It signifies that freedom of expression of thoughts and views is a core value of democracy and development.

This research paper tries to trace to find out that what were the views about expression of thoughts in ancient India. The paper makes an effort to provide an Indian orientation about communication. This will help to understand communication process with Indian perspective. This is an exploratory research. The study is based on secondary data.

12
Gender Equality in Vedic Perspective

Drusya C.S.
B.A. Sanskrit student, Sree Sankara College, Kalady, Kerala
drusyacs2001@gmail.com

Gender equality is a fundamental human right. It is also known as sexual equality or equality of sexes, ensuring equal opportunities for all. Gender equality is more than equal representation, which is strongly tied to women rights. Women in the society are often cornered and are refrained from getting equal rights as men to education, decision-making and economic independence. Gender equality means that the different behaviour and aspirations and needs of men and women are considered, valued and favoured equally. In the early Vedic age had an abundance of moral and liberal values prevailing in the society. All scholars today agree without a doubt that women in ancient India held an elevated position. Many of the Vedic *Ṛśī's* were women.

The prophets *Gārgī* composed several Vedic hymns. Other Vedic hymns are attributed to Vishwāwārā, Siktā and others. Veda also has the solution of the Gender inequality. Gender equality, equality between men and women, entails the concept that all human beings, both men and Women are free to develop their personal abilities and make choices without the limitations. *Rigvedic* hymns were revealed to over 414 *Ṛśīs* out of which, 29 are ladies *Ṛśīkās* implying gender equality. Presence of so many *Ṛśīkās* in Rigveda proves that Almighty God himself considered woman fit enough, qualified and eligible to receive divine revelations.

It is very evident that ancient Indians practised the so-called liberal values of gender equality since ages.

13
Liberty through Karmayoga

Govind M.N.
M.A. Sanskrit Student, Sree Sankara College, Kalady, Kerala
govindmn2000@gmail.com

Everyone wants happiness and peace. From the very beginning of creation everyone seeks happiness. But there is no peace without liberty or freedom. what is freedom? It has several faces—freedom from another country, freedom from another state, freedom for education etc. But in the Vedic perspective freedom means a complete removal of sorrows and it is a state of peace. The complete freedom gets only through the liberation or *mok^a*. This is the concept of *Bhārata*. Mind is the reason for attachment and liberation—'*मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः*' If we control our mind and keep in stillness, we can experience liberty and happiness. This is the real and permanent freedom. *Karmayoga* is the most powerful tool for control the mind. Through *karmayoga*, mind will under our control and it leads to complete freedom. In this way we don't have any attachments with anything. So, it helps to attain freedom.

14
Spiritual Potential of World's Top Languages

His Holiness Dr. Jayant Balaji Athavale & Mr. Sean Clarke
MBBS, Clinical Hypnotherapist & MBA, Technology,
Maharshi Adhyatma Vishwavidyalay, Goa
conferences@spiritual.university

Out of over 6500 languages in the world, only a handful of languages have gained popularity over the centuries for various reasons. However, are these top languages spiritually beneficial as well? Using aura and subtle-energy scanners along with the advanced sixth sense of its research team, the Maharshi University of Spirituality analysed the spiritual potential of the 12 most spoken languages and their scripts. A spiritually positive sentence was translated into these languages and the vibrations from each were analysed. Further, subjects were asked to listen to audios of the same sentence in these languages for 10 minutes each and the effect on their auras was studied. Later, two phonemes (*i.e.*, /m/ and /a/) from the scripts of the topmost languages were analysed similarly. It was found that out of the top 12 languages in the world, Hindi and the Devanagari script emitted the most positive vibrations and the subjects' auras were influenced accordingly. Amongst the Devanagari script, it was found that Sanskrit emitted the best vibrations even though it is spoken by less than 15,000 people. Language is an important means of communication. The script, grammar, phonetics and their meaning all add or subtract from the positivity of this important medium. Anything which has the potential to change an aura will affect the way people think and behave. Sattva, Raja and Tama should be the basis for assessing languages equally and impartially. Understanding this concept can help one to include spiritually positive languages in the linguistics curricula.

15
Prayers for Family Bonding in Veda

Dr. Kalindi Shukla
HoD & Associate Professor, Sardar Vallabhbhai Arts College, Ahmedabad
kalindis1@gmail.com

Mundkopnishad categorise Vedas as *aparā vidyā* amongst two types of *vidyā* as it quotes—
तत्राऽपरा। तस्मै स होवाच द्वे विद्ये वेदितव्ये ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदःशिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो

ज्योतिषमिति । 1.1.4. On this account four Vedas contains subject matter which is helpful to live mundane life easily. Looking into the subject matter of Veda we find topics related to practical wisdom. For instance, *bhikśu sūkta* and *akśa sūkta* preaches practical wisdom. Here we found numerous prayers for health, wealth, prosperity and complete happiness. In this too, Atharvaveda narrates mundane life topics more than three other Vedas as per *Atharvavedabhāṣya bhūmikā*. Considering the opinion of Mundokpnishad and *Atharvavedabhāṣya bhūmikā*, this paper aims to discuss Vedic *sūkta*s which is related to the betterment of temporal life. This paper aims to discuss Atharvaveda 3.30. It talks about the construction of family bonding. Family is the smallest unit of the society. Subsequently healthy families form healthy society and healthy society construct a good nation. Keeping in view the importance of interpersonal healthy family relation, this paper is to discuss 3.30 AV with various aspects.

16

Independent Women of Liberal Vaidika Bhārata (Vaidika Foundations of Feminism)

Dr. Kamna Vimal Sharma
Assistant Professor, Sanskrit, Daulat Ram College, University of Delhi, Delhi
kavi30sh@gmail.com

Often criticized for its pro-masculine mentality, Vedas offer us the epitomes of feministic role models in the form of free and independent, self-dependent and decision-making women like Gārgī, Maitreyī, Kātyayaṇi, Ghoshā, Īlā and many others. The *Vaidika* women had the ability to

- express her sover\\eign creativity, determinations and dreams, for the emancipation of self and the society
- communicate, express, argue effectively and impressively with others.
- take care of her welfare herself.

These women were contented in their chosen way of lives and are assertive enough to demand, struggle for and acquire their right to participate and indulge in creative and contributing discourses and dialogues as in Yaj avalkya–Gārgī dialogue, etc. They are powerful, expressive and in control of their individuality and do not shy away from expressing their wishes, aspirations and objections well expressed in the *sūkta*s revealed to the female *Ṛśīkā*s. They are the bearers of the social responsibilities and leaders in social, intellectual and spiritual lives. They are aware of their strengths and are accepting of their caring, nurturing and emotional nature. They are realistic and neither compete with their male counterparts nor feel themselves to be inferior to anyone. They are the embodiment of powers of various kinds as depicted in the *sūkta*s like *Vāk* etc as revealed to the male rishis. These free self-reliant women of *Vaidika* times are the examples of what feminism aspires in present times. Hence, Vedas provide the right approach to achieve gender equality.

17

In the Vedas: the Reign of Freedom

Koenraad Elst
Distinguished Scholar of Indic Studies, Belgium
koenraad.elst@gmail.com

As Marxist historian Shereen Ratnagar wrote, Vedic society did not yet have the socio-economic conditions for a regimented compartmentalization like the caste system. The Arya Samaj reformists were right in asserting that caste is un-Vedic, not because the Vedas opposed caste, as they themselves did, but because they simply didn't conceive of it. Even the Purusha *Sūkta*, often deemed a later

interpolation into the very youngest book of the Rigveda, doesn't mention the two defining elements of the caste system, viz. hereditary profession and endogamy. It only acknowledged a functional differentiation in advanced societies, which is then integrated following the corporatist model held in common with other societies (upheld *e.g.*, in the Roman Republic by Menenius Agrippa and by St Paul, who founded the Social Doctrine of the Church). Certainly, there must have been inequality in the Vedas, but it was not cast in stone. We can compare it to the role division between the sexes.

Yes, men are likely to be more ambitious and more science-oriented than women—on average. But there are women who in this respect are more like men. In post-Vedic and premodern Hinduism, as in Christianity (with no female Church Father's in sight) and Islam, these women were blocked and the presumed female average was imposed on all of women. By contrast, Vedic society had room for a Gārgī who could hold her own in debate with *Ṛṣī* Yajñavalkya. Similarly, in respect of classes, society shows a certain inertia, with people tending on average to follow in their parents' footsteps, but Vedic society showed no objection to Rishis from a non-Rishi background. Modern Hindu discourse tends to be defensive about equality in Hindu society, trying to fit it into the Procrustean bed of purely modern notions of equality. Such standard is never imposed on budding Christianity and Islam, but Hindus join their detractors in unhistorical trying to live up to it. The source texts give a far more relaxed and convincing picture of the social equation.

18

Human Rights in Vedic Literature: An Overview

Lakshmi Vinayakumar
M.A. Sanskrit student, Sree Sankara College, Kalady, Kerala
lakshmivinayan99@gmail.com

Human beings are rational. By virtue of being human they possess certain basic and inalienable rights commonly known as human rights. The history of mankind is marked by efforts to ensure for the dignity of human rights. These human rights have a special significance in the changing scenario, especially in Vedic period. This notion is particularly reflected when one seeks to explore the inherent values laid down in Vedic texts. The philosophers of Vedic period believed that human rights were based on mankind increasing demand for life in which the inherent dignity and worth of each human beings deserved to receive respect and protection. Prime importance of these rights was in the rich 1ndian legacy of, 'The world is one family'.

Even Vedas including Upanishads; *Shruti* were the primordial sources of dharma which is compendious term for all human rights and duties, the observance of which was regarded as essential for securing peace and happiness to individuals and society as well.

19

Mokṣatatva on the light of the Bṛhadāraṇyakopaniṣad

Dr. Mitali Goswami
Assistant Professor, Sanskrit, Nowgong Girls College, Assam
mita.gs1987@gmail.com

The Bṇhadāraṇyakopaniṣad occupies a specific place among the Upaniṣads. This Upaniṣad is regarded as the greatest one among the other Upaniṣads by its size and content. The seventeenth kāṇḍa or book of the Kāṇva recension and the 'chapter four to nine in the fourteenth book of the Mādhyandina recension of the Śatapathabrāhmaṇa of Śuklayajurveda is called Bṛhadāraṇyakopaniṣad. Among different topics found in the Upaniṣads related to the world and life, they mainly discuss the brahman, *jīva*, *mokṣa*, *ātmatatva* etc.

Here in this paper a modest attempt is made to find out the concept of liberation or *mokṣa* delineated in the Bṛhadāraṇyakopaniṣad.

20

Morality, Equality and Freedom: In the Light of Swami Vivekananda's Universal Ethics

Dr. Munmun Chakraborty
Assistant Professor, Philosophy, Assam University, Silchar, Assam
munmunchakraborty58@gmail.com

Over the years, moral philosophers have been struggling to address and resolve the problem related to some fundamental ethical questions. Contemporary philosophers hardly agree among themselves to admit the rationale that makes an ethical action good or bad. There is no universally accepted ethical principle to determine the nature of good, equality, justice, etc. It seems modern theorists have tried to examine an ethical action or ethical situation from a limited perspective without acknowledging the multidimensional aspects of a moral agent and his action. Swami Vivekananda's universal ethics, on the other hand, seems to provide us with a profound and comprehensive understanding of ethical laws. Even if his intention was never to develop a systematic account of ethical laws yet his observations have tremendous relevance even today in analyzing contemporary theories and laws of ethics. The uniqueness of his approach is that he has employed the age-old Vedic ideas to address the modern challenges and has shown how morality is intertwined with spirituality and religion. He was critical to accept any absolute distinction between religion and morality, between man and woman, between individual beings and the universe, and so on. Morality is the expression of our inner purity and divinity that enables us to realize the ultimate oneness and freedom. He thus emphatically says, 'Ethics itself is not the end, but the means to the end'. This attitude of Swami Vivekananda is not biased rather he gives us a bigger goal to justify why should one be moral.

The paper thus argues that the philosophy of the Upanishads is not just about the abstract metaphysical problems, it incorporates the root of ethical values that Swamiji has successfully unfolded in this modern age.

21

The Contribution of the Vedas to Communal Harmony (With Special Reference to the Rigveda)

Dr. Pallabi Dutta
Assistant Professor, Sanskrit, Pragjyotish College, Assam
plabidutta@gmail.com

In the advancement of science and technology, the supersonic satellite communication has transformed the world into a global village. We can able to get instant news of incidents that has taken place in any corner of the world. Given the enormous possibilities for peace and harmony between fellow human beings, it is expected that we can live without any turmoil. Yet, strangely, conflicts between people of different castes and creed are seen to be increasing day by day, which is not a good sign for the mankind. It is; therefore, the deep-seated desire of man is for a world, which can ensure communal harmony. The Vedas are the earliest monumental works of India, where the universal message of brotherhood is revealed. This is evident from a popular verse of the Rigveda, which states—'*समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।*' (United be your purpose, harmonious be your feelings, collected be your mind, in the same way as all the various aspects of the universe exist in togetherness, wholeness). The Vedas exerted influences on the individual and it aimed at upbringing of a man for the progress of the community as a whole. The Rigveda teaches us—'*मनुर्भव*', be a sublime man. In the present paper, our endeavour will be to discuss the message of communal harmony as envisaged in the pages of the Rigveda.

22
Duties of Husband and Wife as revealed in the Vedas and Later Texts

Dr. Raghava S. Boddupalli
Institute of Sanskrit and Vedic Studies (ISVS), Bangalore, Karnataka
raghava7boddupalli@gmail.com

The duality of man-woman was created right at the beginning of the creation of the universe. Certain genetic qualities and their actions are naturally associated with every creation of the creator, the *Paramātma*. Human beings should not interfere with this principle of creation; rather they should act in accordance with this code of conduct. All actions that go against these principles, though they may seem to be successful in the beginning, turn pernicious later. Man and Woman are endowed with certain behavioral traits, unique and common to both the genders.

The creator has given the greatest honour to woman by embedding the organ responsible for creating life, *i.e.*,, Motherhood. This has to be revered and celebrated in the world. It is revealed in the Taittirīyōpaniṣad that the first and foremost honour is accredited to the mother as '*Mātṛ dēvō bhava*', followed by father as '*Pitṛ dēvō bhava*', then guru, '*Ācharya dēvō bhava*', and then to the guest, '*Atithi dēvō bhava*'. The Vedas has laid down rules and regulations especially to describe the duties of the man and woman in their *gṛhasthāśram*, *i.e.*, after their marriage.

It may even be appropriate to claim that the Sanātana Dharma accords more importance and honour to a woman than to a man. In the Atharvaveda and in the Manusmṛti, a comprehensive way of life is attributed to man and woman. This article further elaborates on the salient features revealed in the Vedas and other later texts.

23
Social Equality in Vedic Literature

Raghul Reghu
BA Sanskrit student, Sree Sankara College, Kalady, Kerala
raghulreghu6006@gmail.com

The term 'equality' signifies a qualitative relationship. Modern society is surrounded by the thoughts of inequality, which includes the problem of social inequality, caste inequality, gender inequality, racial inequality etc. Vedas are the one which consists in itself the solution of all problems of inequality related with the society. Vedas talk about equality and brotherhood—"*वसुधैव कुटुंबकम्*" was the motto of Vedic civilization. All had equal opportunity in all walks of life in Vedic civilization. There are many Vedic hymns which command equality of all by birth and unity and harmony among them—"*समानो मन्त्रः समितिः समानी*" (RV 10.191.3). Vedas are also helpful in diminishing the major social evils such as caste inequality and gender inequality etc.—"*समानी व आकूतिरू समाना हृदयानि वः।*" RV.10.191.4 'Common be your intension, common be (the wishes of) your heart, common be your thoughts, so that there may be thorough union among you.'

The '*Varna*' system in 'Purusha Sūkta' has caused many misconceptions in today's society. According to Bhagvatgita (5.18) "*विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चौव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।*"

This means that all are equal to Brahman, whether *Brahman* or *Shudra*. Veda also has the solution of the Gender inequality. Veda gives the concept that all human beings, both men and women are free to develop their personal abilities and make choices without the limitations.

24

Imprints of the Concept of Niṣkāma Karma: Exploring Vedic and Upaniṣadic Teachings

Dr. Raj Verma Sinha
Philosophy, Miranda House, University of Delhi
raj.verma@mirandahouse.ac.in

The concept of *Ni^kāma Karma* is one of the central notions of *Śrimad-bhagvad-gītā*. It presents the idea of *karma* that is not binding, rather elevating. In the Vedic and Upaniṣadic texts we do not find the express mention of the term. Some authors have even questioned the presence of the doctrine of *Karma* in the Vedas and early Upani^ads, rather the emphasis is primarily and plainly on the ritualistic *Karma*s with doubtful or no ethical implication. I would like to argue in the paper that though it is true that the term *Niṣkāma Karma* finds no explicit mention in the Vedic and Upaniṣadic literature, the spirit of *Niṣkāma Karma* is not only present in their teachings, it has also been eulogised there. It is there in the germinal form, so much so that a preliminary reading of these before the reading of the Gītā would make the ideas developed in the latter look less surprising. I would like to argue here from two main aspect. First is the implicit presence of this idea in spirit and essence, and second, in the notion of agency where the idea of *sākṣi-bhāva* appears to be a clear precursor to the idea of an *udāsīna* agent for the practice of *Niṣkāma Karma*.

25

Vedas Versus Modern Science on the Concept of Liberty and Equality

Prof. (Dr.) Ram Gopal
President, WAVES, Jodhpur Chapter & Former Director, DRDO GOI, Delhi
drramgopalresearch@gmail.com

The Vedic *seers* were great thinkers practicing science. The concept of modern human rights draws heavily from the natural laws of liberty and equality. United Nations adopted the UDHR (Universal Declaration of Human Rights) in 1948. The UDHR has codified and standardized the rights of individuals on liberty and equality into international law for every human being. The resonance of high ideals of liberty, equality, and fraternity could be aurally perceived in the couplets of Vedic literature. Rigveda (RV) verbalizes that human actions and thoughts are diverse in nature and prays for noble noetic thoughts to come to humans from all sides and spread across the universe. RV invokes deities for the liberty of body (*tan*), shelter (*skirdhi*), and life (*jibhasi*). This is the reverberation of high ideals of liberty advocated by all the human rights bodies. RV calls for parity and unity of all. According to RV, no one is either superior or inferior, all are brothers and people should work for each other's interest and thus progress collectively. (RV 5.60.5). The Vedic concept of creation of life and working is based on natural laws of equality in *Jada* and *Chetan* having origin from two primal sources—Energy and Space. *Kanād Ṛśī* and nuclear scientists (Vedic physicists) also have stated atomic and sub atomic particles (fundamental particles of matter, *kadas*) consist of electrons, protons, neutrons, quarks, originated from these to primal sources (*tatvas*).

The Vedas could form the very potential basis for the modem science as research into the Vedic concepts gain momentum by use of advanced scientific instruments.

Environmental awareness speaks volumes for the Vedas that advocates living in consonance with nature which the modern science is in the process of rediscovering.

The Vedas and modern science may urge upon men to work with natural law of liberty and equality together to serve suffering humanity.

26

Equality Between Married Couples in Bhāratiya Scriptures

Rati Hegde
Columnist and Author
ratihegde@gmail.com

Whenever we talk about equality in our Bhārat, the first thought that crops up into our mind is that of how we have been a caste-ridden, patriarchal society and how inequality rules. This thought has been imprinted into our minds especially in the last 100 years thanks to atrocity literature and westernized thought process. We automatically think of the worst and feel that *Sanātan Dharma* a.k.a. Hinduism needs a lot of reform especially with respect to patriarchy. That evidence to the contrary lies in front of our eyes via our stories, our sculptures, art forms, etc. doesn't register in our mind at all.

In this paper. I shall try to show that *Bhāratiya* husbands in our ancient tradition did a lot to express their love and respect to their wife and that in no way did they treat their wife as someone unequal to them or below them in status. In fact, they took the words '*Ardhāngini*' and '*Saha-dharma Patni*' very seriously. Sri Rama's story stands as the prime example of this. But He is not the only one—we have Shiva, Bheema, Nala, Yajñavalkya, Vasishtha and many more who by their actions teach us to be respectful to their better halves. They also indulged in work which people traditionally thought of as only fit for the womenfolk, and also encouraged their wives to do that which was traditionally thought of as only belonging to the men's domain.

Yes, it would have been great if stories hammered this point home blatantly, but Hindu *dharma* is all about choices and duty.

27

Principles of Human Relationship Enunciated in Vedic Literature

Dr. Ravi Prakash Gorthi
Emeritus Professor, LNMIIT, Jaipur, Rajasthan
rgorthi@lnmiit.ac.in

Every human being, in all stages of one's own life, from the childhood to adulthood to middle age (either as an employee or employer) to retired life, has responsibilities towards one's own self, family, co-workers and society. Whether a human being realises or not, he/she has responsibilities even towards the eco-system partners of this Universe, such as animals, birds, trees, earth, water, fire, air, and space. Discharging these responsibilities intricately involves the development and refinement of one's own relationships with other living and non-living partners of co-existence. These relationships can make or break human being's endeavours. But, often, human beings focus heavily on professional knowledge, skills and utilize mere common-sense to build relationships. However, the pillars and principles of human relationships should be systematically studied and contemplated upon from a young adult age. The Gurukul Education System of ancient India used to impart knowledge and skills of the principles of human relationships, building one's own character along with developing professional expertise.

In modern times, the focus on human relationships has been greatly diluted during the primary, secondary and higher education. In this paper, the author presents a set of

(i) Basic Principles for children and young adults and

(ii) Advanced Principles for adults and gown-up persons to systematically understand, practice and refine one's own capability with human relationships.

28

Praises for Liberal Donors as Observed in the Ṛgveda

Dr. Rupsmita Buzarbaruah
Assistant Professor, Sanskrit, Nalbari College, Nalbari, Assam
vrupsmitabuzarbaruah335@gmail.com

There are some hymns in the Ṛgveda, which are the panegyrics of liberal donors. These hymns are known as *Dānastuti*s. *Dakṣiṇā*, or the sacrificial fee, to be made by the institutors of a religious ceremony to the priests entertained by them, is worshipped as a deity personified. It is stated that the donors of the sacrificial fee have mounted high in heaven; those who are givers of horses dwell with the sun; the givers of gold obtain immortality. Another hymn called *Bhikṣusūkta* consists of a collection of maxims inculcating the duty of well-doing and charity. In this hymn, virtues of hospitality are described. One who gives charities to the needy will get the fruit equivalent to that of performing sacrifices. The poems of this group may be regarded as the forerunners of the sententious poetry of later Sanskrit literature. In the present paper an attempt will make to bring out the importance of liberal donors and of charity.

29

Sāmanasya Sūktas: Exercises of Equality

Dr. Sanghamitra Mukherjee
Asst. Prof., Sanskrit, Ramakrishna Sarada Mission
Vivekananda Vidyabhavan, Kolkata, WB
sanghamitramukherjee18@gmail.com

Equality is about ensuring that every individual has an equal opportunity to make the most of their lives and talents. Social equality is a state of affairs in which all individuals within a specific society have equal rights, liberties, and status, possibly including civil rights, freedom of expression, autonomy, and equal access to certain public goods and social services. The Right to Equality is one of the fundamental rights enshrined in the Constitution of India and is considered basic feature of the Indian Constitution. It ensures equal rights to all citizens. In the tradition of India concept and thoughts for Right to Equality is an age old realization which finds its origin in the Vedic time. The well-known *Samgyana sūkta* of the Rigveda (X.191) speaks highly of equality and brotherhood. All had equal opportunity in all walks of life in Vedic civilization. In Atharvaveda, there are several hymns to secure harmony and allay discord and according to Bloomfield they are known as *sāmnanasyani* (3.30, 6.73, 6.94, 6.72, 6.42, 6.64, 7.52, 2.27 and 7.12). Vedic seers realized that all people should be mutually bound by love and understanding with each other and the concept of equality is essential for ensuring happiness and harmony in the society. In this paper, an attempt will be made to highlight the Atharvaveda mantras of equality.

30

Glory of Woman and Vedas

Dr. Sanjeev Prasad
Consultant Psychiatrist & Drug De-Addiction Specialist, Delhi
sanjeevprasad.psy@gmail.com

Vedic deliberations cover many aspects of woman, her role and contributions in shaping the society besides enunciating her strong spiritual self. This paper seeks to trace the glory as bestowed in the Vedas and how it stands today in the current times. The dialogue attempts to trace the facets of Vedic culture that have been important in influencing the status Indian woman in the ancient times

to the current times. A brief narration of the high respect for woman in Vedic times sets the backdrop for reference. The author cites important verses from relevant chapters on woman. The highlights are on her role, empowerment, rights and participation at all levels in the society. Briefly, later periods in our history, the invasions that brought about retrograde changes in the status of women in India is put forth in a chronological order. Ancient culture was impacted but it was alive. The Vedic influence on society however subtle in the past has always been palpable. It has been influencing the generations along the way. The influence on woman's status has been an ongoing process through the centuries. A comparison is done to see the status of modern Indian women on the parameters we had begun our discussion with. Finally, the paper sets out to examine the woman in society today.

31
Vedic Perspective and the Contemporary Theories of Social Choice and Individual Values

Dr. Sati Shankar
Global Synergetic Foundation, New Delhi
satigsf@gmail.com

The Vedic knowledge system begins with the first axiom that 'it all is a manifestation of the *svabhāva* of Brahmn,' and then comes the postulation of a seamless unity and equivalence between the cosmic, the terrestrial and the physiological 'appearances' as pointed in Shatpatha Brahmana (8.1.1.6.2-6). It is declared by the Rigveda, 'That which is one has become this all (RV 8.58.02), Chandogya Upanishad says, *sarvaṃ khalvidaṃ brahma* (3.14.1), All this is Brahman. In Bhagvadgita, Shri Krishna says, 'I am the seed that can be found in every creature. Arjuna, for, without me nothing can exist. neither animate nor inanimate' (10:39). Our Vedic Scriptures and the Scriptures around the world, therefore, preach, "*Know Thyself*." And then, there arises a question, 'whose equality and liberty and where?' The fact that the very notion of what we call a 'man', has different connotations in different civilizational traditions and 'animal' etymologically denoting 'that which has no soul'. This gives us a sufficient ground to be careful while asking questions for rights, liberty, and equality, and warrants for a systematic reconsideration of the very notion of the fundamental entities for which such voices are raised. It provokes also for methodological questions and the solutions thereof. Our Vedic sources begin with the Rigveda and only end with the most modern *Vaishnava*, *Saiva*, and *Tantric* treatises. In this paper, we make a review of our Vedic perspective to approach the problems stated above and examine the contemporary theories of social choice and individual values, based on which voices on equality, liberty and justice are raised in the world, and which in turn, are based on various presumptions like utilitarianism, and others and moral principles assigned to the poorly defined mortal creature, called man.

32
Revisiting Liberation: Nagarjuna in Context

Dr. Saumya Kanti Biswas
Department of Philosophy, Assam University, Silchar
saumyakanti.biswas@gmail.com

Ārya Nāgārjuna's (2nd century C.E.) methodological treatment of Sunyat*ā* is pregnant with practical philosophical implications which claim recognition of a significant extension of the Vedic Darshan. The following project is a humble effort to re-consider Nāgārjuna's arguments from the perspective of a dialectical understanding of the concept of Liberation in Mahayana Buddhism at large on the one hand, and particularly the practical concerns of Nāgārjuna's philosophy and its different subsequent theoretic interpretations on the other. The study having been recognized the technical-

philosophical intent of Nāgārjuna's argumentations and its methodological as well as metaphysical significances, tries to stress upon the implications and theoretic understandings of the Vedic standards of practicality and world-view.

The study limits its scope within the chief texts of Nāgārjuna and the commentaries made by important scholars of Nāgārjuna and also would try to refer to some of the important secondary sources of interpretative echoes from different dimensions.

33
The Idea of Integrity in Vedic Suktas

Srabani Maharana
OURIIP Project Assistant, Sri Jagannath Sanskrit University, Shri Vihar, Puri
srabanimaharana67@gmail.com

Vedic literature not only deals with ritualistic performances, but also describes social harmony, integrity, prosperity and fraternity in the *suktas*. It gives a picture of very civilized and rich culture and people. The integrity of heart and mind always brings success in any action whether it is intellectual or social or institutional. The prayers for such concordance are found in the *Saṁjāana sukta* of *Ṛgveda* and elaborately in six *Samansya suktas* of *Atharvaveda*. *Rògveda* sows the seeds in four mantras through the *Ṛsi Samvanana Añgirasa* and on the basis of this idea, *Atharvaveda* explains the ways of integrity, fraternity and harmony in the family, in the society, among the kingdoms or in the country and among the fellow beings. A detailed is aimed to present about the ideas of harmony and prosperity through these Vedic sūktas which are guiding lights for all time.

A humble attempt will be made in this paper to bring out the ways for concord which may pave the path for a healthy and happy society.

34
Concept of Liberty and Equality as Seen in the Construct of Varṇāśrama Dharma

Mr. Subramanian Chidambaran
M.A. Sanskrit (Vedanta), Diploma in Manuscriptology from University of Mumbai
Bachelor of Engineering (Electrical) from VJTI, Mumbai
Currently pursuing Ph.D. from Chinmaya Vishwavidyapeeth
bcsubbu@gmail.com

Varṇāśrama Dharma is one of the key constructs of our *Sanātana Dharma* and one of the factors responsible for its sustainability. Many modern scholars have been popularizing the narrative that the *Cāturvaṇṇya* format (*i.e.*, the classification of society into *Brāhmaṇa*, *Kṣatriya*, *Vaiśya* and *Śūdra*) was responsible for division of the society thus fueling inequality. However, a deeper analysis reveals that the *Cāturvaṛṇya* format was probably amongst the best societal construct that encouraged meritocracy and ability for the individual to attain his/her fullest potential. Thus, we do not find concept of 'reservations' but 'equal opportunity'.

As regards liberty, the modern understanding is quite different from how *Sanātana Dharma* looked at it. Our seers analyzed what bondage and freedom meant in the truest sense of the term rather than as momentary or superficial. This was then institutionalized through the four *āśrama*s of *Brahmacarya*, *Gṛhasta*, *Vānaprastha* and *Sanyāsa*.

This paper thus aims to explore the above aspects in detail and bring to forth the concepts of 'liberty' and 'equality' as seen in the construct of *Varṇāśrama Dharma*.

35
The Concept of Human Rights in Veda

Swathy M.S.
B.Ed. Student, Sanskrit, Central Sanskrit University, Kot Bhalwal, Jammu
swathysanthosh28@gmail.com

Human Rights are those rights which are essential for the survival of humans. The history of mankind is marked by efforts to ensure respect for the dignity of human beings. The Rigveda & Atharvaveda, declared all human beings are equal and respect the dignity of human rights. There are religious theories that maintain that human rights developed within a moral context. A basic sense of non-discrimination was pre-eminent in the ancient sacred texts. '*Ātmā*' that all human beings embody is regarded as the integral part of the divine whole—'*Paramātmā*' which is constituent of *param* (Ultimate) and *ātmā* (soul). 'No one is superior or inferior; all are brothers; all should strive for the interest of all and progress collectively.'

Rigveda also talks about three rights that are civil in nature *i.e.*, *Tan* (body), *Skridhi* (dwelling place), *Jibhasi* (life), thereby relating to the right to physical liberty, right to shelter and right to life as we know them today. Atharvaveda also provides for human rights such as right to food and water. The concept of *dharma* can be differently interpreted, for instance, in religious context, it can be used to perform one' religious duties.

It can also be taken as the performance of duties by all irrespective of their social, economic or cultural status. Ancient Indian philosophy believes that an individual can have an entitlement to a right only when he has fulfilled his duty or *karma*. Thus, one could find a strong foundational theory for the idea of human rights while studying Vedas.

The concept of *dharma* is a remarkable feature of Indian culture which is unparalleled significance value.

36
Fraternity for Enumerating Liberty and Equality at the Pinnacle

Dr. T.V. Gopal
Co-ordinator, Centre for Applied Research in Indic Technologies [CARIT] &
Professor, Computer Science and Engineering, Anna University, Chennai
gopal@annauniv.edu, gopal.tadepalli@gmail.com

Only the constraints of morality and law make liberty possible. Fraternity is perhaps the best reflection of both liberty and equality at the pinnacle. The feeling of friendship and support between people in the same group that makes fraternity glow as an upright architectural formation *i.e.*, the pinnacle. India opted for Independence making it possible for many dilemmas in its progress stem from 'personal best answers' or reducible to them.

Faith is an individual's personal matter. It is enumeration of at least a few prominent reasons which accords adequate genericity in many matters related to faith. It is by far the most popular method of gaining acceptability in a given community. This paper is a study of liberty and equality within these perspectives. In Indic traditions, *Sāmkhya* is based on 'enumeration'. In a literary sense, enumeration is used as a device to break a topic or argument down into component parts, or to list details of the subject one by one. It is a brilliant approach to establish a *Satkārya* as the transformation of a given '*kārana* [cause]'.

Sāmkhya also provides the pertinent measures to improve within the ambit of a generic and global societal framework founded on the principles of fraternity.

37

Liberty and Equality in the Kirtanas of Tyagaraja of Karnatak Music

Prof. T. Seetharamalakshmi
Ph.D., Music & Life member, WAVES
tsrlakshmi@yahoo.com

Tyagaraja is a famous Vaggeyakara of Carnatic Music. He is a quite familiar scholar with the knowledge of Veda and Vedanta Principles. He is a social reformer and spiritual Leader. He always influenced many people right from 17th Century and onwards. He has written several compositions in various ragas which are in vogue now also. He has inculcated the fact that there is always scope for mankind to turn away from the mundane life and fix attention upon spiritual pursuits with the right of liberty and equality. One can pick up mind upon the welfare of people and the divinities. Music is such a branch of knowledge and source for soothing that it would be enjoyable to *pasu*, *sisus* and the *phanis*, the serpents. Veda is knowledge meant to educate mankind to the realms of happiness, freedom, liberty, and equality in a positive way. As a continuation effort there are many subsequent branches of knowledge spreading the rights in a positive way. These would lead people to the permanent Happiness and birthlessness besides leading life with ease, happiness and understanding.

Out of hundreds of compositions which this Vaggeyakara and the Vedantin wrote, I like to focus on two *kirtana*s of the Saint. All his *kirtana*s collectively designated as *Tyagopanishad* meaning the messages and knowledge couched in them. *Nada* is the common basis for Veda and the Music. Music is designated as Nada Veda and practice of it is Nadopaasana. In the present paper, two *kirtana*s of Tyagaraja namely: '*Dudukugala nanne dora kodaku brochuno'* and '*Endaro mahanubhavulu andadriki vandanamulu'* are considered. Rama is the *Arādhyā devatā* of Tyagaraja and hence he designates Rama as 'Dorakoduku' meaning son of a king (Dasaratha, a Dora) a capable person to protect the human rights. The *kirtana*s talk about the liberty to praise and beget grace and blessing from the Supreme Lord. Also, in the first *kirtana*, it is pointed out that people are prone to misuse the liberty and sense of equality which have Vedic dignity. Yet by mending the behavior and checking the character and conduct smooth living and emancipation would be possible.

38

Gender Equality in Vedic Perspectives

Rutam Biswal
Researcher, Centre of Material Sciences, Institute of Inter-Disciplinary Studies,
University of Allahabad, Prayagraj
biswalrutam5@gmail.com

Vedic literature teaches equality among the people in the society. No one is superior or no one is inferior. One may find equality (समानता) in the Vedas in many contexts. Gender-equality denotes equality between men and women which entails the concept that all human beings are equal. The concept of gender-equality is a challenge in today's context as today's people are aware of the fact that there should not be any discrepancy between men and women in the context of behaviour, aspirations and needs etc. Women should be valued and favoured equally. The present paper aims to discuss the notion of gender-equality as reflected in Vedic literature. The paper will depict the nature as well as the status of women in ancient India in the light of Vedic evidences. In ancient India, women had a respectable position in the society. The Goddesses were considered as शक्ति-s to respect women. The concept of अर्धनारीश्वर can also be treated as the best example of Gender equality. In Vedic society women participated in religious ceremony and rituals (कर्मकाण्ड) etc. Widows had right to remarry and child-marriages was almost taboo in the-then society. However, in the later Vedic period, the position of women gradually deteriorated. The system of Sati came to existence during later Vedic period. Among the Vedas,the Rigveda provides ample evidence to prove the concept of Gender-equality. Many of the Vedic seers were women and they were rightly called ऋषिका-s.

HINDI ABSTRACTS

39

वर्तमान वैश्विक समानता बनाम वैदिक समानता

प्रो. अजय कुमार झा
आचार्य, संस्कृत, सत्यवती महाविद्यालय (दि.वि.)
dr.ajaydu@gmail.com

वर्तमान विश्व में असमानता के विषय में खूब चर्चा होती है। गत अनेक शताब्दियों से इसको दूर के अनेक उपाय किये जा रहे हैं। परन्तु जैसा दृष्टिगोचर हो रहा है, उससे स्पष्ट है कि असमानता दूर तो नहीं ही हुई है, अपितु बढ़ रही है। कुछ ही दिन पूर्व किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार पूरी दुनिया की सम्पत्ति का 45.8% केवल 1.1% लोगों के पास है। स्पष्ट है कि हम विविध क्षेत्रों में व्याप्त असमानता को दूर करने के जिन उपायों को अपना रहे हैं, वे उपाय कहीं न कहीं त्रुटिपूर्ण है। इस विषय में वैदिक दृष्टिकोण को समझना अत्यन्त आवश्यक है। ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किच जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुन्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।। इस मन्त्र में मुख्य रूप से चार सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है–1. संसार में विद्यमान समस्त सम्पदाओं (जड-चेतन) में से किसी पर भी मनुष्य का अधिकार नहीं है। 2. संसार की समस्त सम्पदाओं का एक मात्र स्वामी ईश्वर है, अतः वे सभी उस सर्वशक्तिमान ईश्वर से व्याप्त हैं। 3. मनुष्य का ईश्वरीय सम्पदाओं पर आसक्ति ठीक नहीं है। 4. मनुष्य त्याग और आवश्यकता के अनुसार ही उसका उपभोग कर सकता है।

वर्तमान युग का मनुष्य इन चार सिद्धान्तों को स्वीकार कर और इसका आचरण में अनुपालन कर अत्यन्त सरलता से वैश्विक असमानता को दूर कर सकता है। इस शोध निबन्ध में विविध प्रमाणों के अधार पर वैदिक समानता की अवधारणा को वर्तमान वैश्विक असमानता को दूर करने का उत्तम मार्ग सिद्ध किया गया है।

40

सामंजस्य की वैदिक अवधारणा एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य

प्रो. अंजू सेठ
आचार्य, संस्कृत, सत्यवती महाविद्यालय (प्रातः)
dr.anjuseth@gmail.com

वेद ज्ञान के अगाध रत्नाकर हैं, जिनमें विविध संकल्पनाओं, अवधारणाओं एवं विचारात्मक अभिव्यक्ति से समन्वित सभ्यता एवं संस्कृति के चिरस्थायी तथ्य समन्वित हैं। वैदिक ऋषियों की अभूतपूर्व सूक्ष्मेक्षिकादृष्टि सभी वर्तमानकालिक समस्याओं का अतिपूर्व में ही अवलोकन कर उसके निवारणार्थ उपाय प्रस्तुत कर देती थी। सामंजस्य भावना का चित्रण भी ऋषियों ने भावयुक्त होकर किया था। वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति सामंजस्य प्रधान संस्कृति थी। सामंजस्य की भावना से ओतप्रोत थी। उस युग में आदिभौतिक, आध्यात्मिक, अलौकिक, व्यक्तिगत, सामाजिक, सांस्कृतिक, वैचारिक स्तर पर सामंजस्य की भावना के दर्शन पग-पग पर होते हैं यथा ऋग्वेद 10.191.2-3, 10.90.11-12, 10.90.114, 10.125.5, अथर्ववेद 11.1.30, 11.5.18, 3.30.6, यजुर्वेद 26.02 इत्यादि में मानसिक, वाचिक, कायिक सामंजस्य का उत्तम वर्णन प्राप्त होता है। वर्तमान भौतिकतावादी अर्थप्रधान युग में जहां टका टका धर्म ही एकमात्र साध्य है, यहां वैदिक सामंजस्य एवं सौहार्द भावना की अति आवश्यकता है। मानव जाति की सभी असद्भावी से रक्षा करने हेतु तथा सार्वभौमिक कल्याण की प्राप्ति हेतु वैदिक सामंजस्य की महती उपयोगिता दृष्टिगत होती है। उपयोगिता केवल सैद्धान्तिक न होकर कार्यान्वित भी हो, इस उद्देश्य हेतु प्रस्तुत लेख में वैदिक सौहार्द एवं सामंजस्य भावना को प्रस्तुत करने के साथ साथ वर्तमान वैश्विक समस्याओं के समाधान में उसकी उपयोगिता को सतथ्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

41

श्रीर्वै राष्ट्रम्: शतपथ ब्राह्मण की अवधारणा

डॉ. अपर्णा धीर खण्डेलवाल

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ इन्डिक स्टडीज़, इन्स्टिटयूट ऑफ ऐड्वान्स्ट साइन्सिज, डार्टमोथ, एम.ए., यू.एस.ए. एवं सचिव (प्रशा.), वेव्ज, भारत

dhir.aparna@gmail.com, adhir@inads.org

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि इस वर्ष भारतवासी भारत की स्वतन्त्रता की 75वीं वर्षगाँठ मना रहे हैं। इस शुभ अवसर पर भारत सरकार द्वारा 'आजादी का अमृत महोत्सव' मनाया जा रहा है, जिसमें प्रगतिशील भारत की आजादी के 75 साल के गौरवशाली इतिहास को बताया जा रहा है। भारत के गौरव की गाथा के कई आयाम हैं, परन्तु वर्तमान में आई इस वैश्विक आपदा ने पुनः भारतवासियों को 'एकता' और 'आत्मनिर्भर भारत' के प्रति जागरूक रहने का संदेश दिया है। हमारे समग्र वैदिक एवं लौकिक ग्रन्थ 'राष्ट्रीय-चेतना' से ओत-प्रोत हैं। इन्हीं ग्रन्थों में से एक है शुक्लयजुर्वेदीय शतपथ ब्राह्मण।

ऋषि याज्ञवल्क्य द्वारा प्रोक्त इस विशालकाय ब्राह्मण में 'श्रीर्वै राष्ट्रम्' (6.7.3.7) कहकर राष्ट्र को 'श्री' बताया गया है। राष्ट्र 'श्री' तभी कहलाएगा जब वह सब ओर से सुरक्षित हो, समस्त वैभव से सम्पन्न, हो, शक्ति से सम्पन्न हो, धन-धान्य से परिपूर्ण हो, व्यवस्थित हो, तथा जहाँ के प्रजाजन शिक्षित हो। ऐसे ही कुछ उदाहरणों का प्रस्तुत शोध-पत्र में शतपथ ब्राह्मण के सन्दर्भ में उल्लेख किया जायेगा। साथ ही राजा के सम्बन्ध में राजसूय (5.1.1.12–13) और वाजपेय (5.1.1.8–11) 'राज्यायाऽलमवरं वै राजसूयं परं वाजपेयम्' याज्ञिक-व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला जायेगा क्योंकि किसी भी राष्ट्र को 'श्री' बनाने में उसके शासक का विशेष योगदान रहता है। इस प्रकार शतपथ ब्राह्मण के छोटे से वाक्य 'श्रीर्वै राष्ट्रम्' द्वारा राष्ट्र की उन्नति की कामना की गई है।

42

श्रेय एवं प्रेय की अवधारणा (कठोपनिषद् के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. श्रीमती अर्चना रानी दुबे

पूर्व सीनियर फेलो, संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

dr.archana.dubey61@gmail.com

सा विद्या या विमुक्तये–वही वास्तविक विद्या है, जो मोक्ष दिलाने में सहायक हो तथा औपनिषद् ज्ञान वही है। उपनिषद् को अध्यात्म विद्या अथवा ब्रह्मविद्या कहा जाता है। वेद का अन्तिम भाग होने से इसे वेदान्त भी कहा जाता है। वेद का अन्तिम अध्याय रूप उपनिषद्, ज्ञान का आदिस्रोत और विद्या का अक्षय भण्डार है। यह अध्यात्मविद्या है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं–*अध्यात्मविद्या विद्यानाम्।* उपनिषदों में वर्णित अध्यात्मविद्या की साधना करते हुए मनुष्य परमनिःश्रेयसरूप मानव जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

कठोपनिषद् में वर्णित श्रेय प्रेय की अवधारणा के माध्यम से भारतीय कर्मसिद्धान्त को समझाया गया है। मनुष्य अपने कर्म-संस्कारों के कारण एक बाद दूसरे शरीर को धारण करता है। उसके सुख-दुःख का कारण किसी ईश्वर की इच्छा नहीं, वरन् स्वयं उसका कर्म है। जिस परमात्मा की ओर शास्त्रों में संकेत है, वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् होते हुए भी सर्वव्यापक होते हुए भी कर्म के अटल सिद्धान्त को किसी भी अंश में बदल नहीं सकता है। मोक्षानुभूति समाधि से होती है और समाधि के लिए अभ्यास और वैराग्य की आवश्यकता है। स्थिर सत्य का अनुभव करने के लिए चित्त को वासनारहित बनाना होगा–

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा, येऽस्य हृदिश्रिताः अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि कर्म किए तो जाएँ परन्तु निष्काम होकर, वासनाओं की तृप्ति के लिए नहीं। यही स्थल कर्त्तव्यशास्त्र का उद्गम स्थल है।

43

समाजवादः एक चिंतन (वैदिक सन्दर्भ में)

डॉ. अरुणा शुक्ला

एसोसिएट प्रोफेसर, बी.एल.एम. गर्ल्स कॉलेज (पंजाब)

arunashukla159@gmail.com

वेद के विषय में मनु का कथन है दृ वेदोऽखिलो धर्ममूलम (मनु. 11.6)–वेद सब धर्मों के मूल हैं। मनु ने जिन धर्मों का भी उल्लेख किया है जिस संबंध अथवा प्रसंग में किया है–उन सभी धर्मों की जड़ें वेदों में हैं जैसा की कहा गया है–यः कश्चित कस्यचिदधर्म कस्मनुना प्रकीर्तितः। सः सर्वोभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः।। (मनु. 11.7) वेद सब प्रकार के ज्ञान के स्रोत हैं, इसलिए वेदों में समाजवादी विचारधारा का पाया जाना भी स्वाभाविक है। वैदिक ऋषि जो उस समय के समाज के नेता हैं, समाजवाद के संकल्प से भली भांति परिचित है। उन्होंने एक ऐसा समाज देखा था, जिसके साथ ना केवल गरीब-अमीर में पाया जाने वाला भेदभाव ही मिटे बल्कि मनुष्य-मनुष्य के बीच परस्पर सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक समानता की भावना सुप्तसिंह को स्वाभाविक रूप से जागष्त कर दें। ऋग्वेद 10.117.4 में कथन है की वह मित्र-मित्र नहीं जो आवश्यकता पड़ने पर अपने मित्र की सहायता नहीं करता, उससे अलग ही रहना चाहिए, उसके घर नहीं जाना चाहिए और जो आवश्यकता पड़ने पर सहायता करता है वही मित्र हैं। ऋषियों के मस्तिष्क में सामाजिक समानता न केवल अकेले अर्थ-प्रबंध और धन-संपत्ति का पक्ष स्थापित करना ही नहीं था, बल्कि इसके साथ-साथ मनुष्य-मनुष्य में आत्मिक एकता और समानता की भावना भी स्थापित करना था। प्रस्तुत शोध लेख में इन्हीं मूलभूत सामाजिक समस्याओं का हल खोजने का प्रयास किया जाएगा।

44

वेदों में राष्ट्र का स्वरूप

डॉ. आशा लता पाण्डेय

पूर्व विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, डी.पी.एस. स्कूल, नई दिल्ली

ashapandey@gmail.com

राष्ट्र शब्द से आशय उस भूखण्ड विशेष से होता है जहाँ प्रायः एक ही प्रकार की संस्कृति के लोग बसते हैंद्य वेदों में राष्ट्र से सम्बन्धित राज्य, साम्राज्य, स्वराज्य, महाराज्य आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। अथर्ववेद में राष्ट्र के संवर्धन की कामना की गई है (6.78.2) और स्वराज्य की कल्पना भी की गई है (10.7.31)। राष्ट्र शब्द राज् धातु और ष्ट्र्न् प्रत्यय से मिलकर बना है। यजुर्वेद में राष्ट्र के कल्याण की कामना बहुत सुंदर शब्दों में व्यक्त की गई है (आ राष्ट्रे.....यजुर्वेद 28.22)। सामवेद में देश की एकता और अखंडता की बात की गई है (सामवेद 2.216)। ऋग्वेद में राष्ट्र का अर्थ संगमन का भी है–अहम् राष्ट्री संगमनी वसूनां.....। वैदिक ऋचाओं में संपूर्ण विश्व ही राष्ट्र के रूप में स्वीकार किया गया है–राष्ट्रं प्रजा राष्ट्रं पशवो.....(प्रजा राष्ट्र है, पशु राष्ट्र है तथा जो कुछ भी श्रेष्ठ है राष्ट्र है)–तैत्तिरीय संहिता 3.4.8.2 वस्तुतः यही कारण है कि विश्व को एक राष्ट्र के रूप में स्वीकार करने से वसुधैव कुटुंबकम् सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार-मानने की कल्पना साकार हुई है और आज के युग में यदि हम सभी ऐसा सोचने लगे तो कहीं भी कलह-क्लेश का साम्राज्य न होगा और सभी जगह सभी लोग वेद की कल्पना को साकार करते हुए वेद वाक्य का जीवन में परिपालन करते हुए शांति व सुखमय जीवन व्यतीत कर सकेंगे, जो आजके युग की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

45

वेदों में भारतीय राष्ट्र की संकल्पना

डॉ. बिनोद कुमार तिवारी

लेखक एवं आचार्य (प्राच्यविद्या), नई दिल्ली

dr.binodkrtiwari@gmail.com

एतत् देश प्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मनः, स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।

आचार्य मनु महाराज कहते हैं कि इस देश की संतानों ने ही विश्व को सभ्यता और संस्कृति से अवगत कराया। वेदों में भारतीय राष्ट्रीयता के सशक्त सूत्रों का अवलोकन करते हैं। *राष्ट्रे जाग्रयाम वयम पुरोहिता, राष्ट्रम क्षत्रियस्',*

राजा राष्ट्रानाम, सविता राष्ट्रम राष्ट्रपति, इत्यादि अगणित सन्दर्भ हैं। अथर्ववेद के द्वादश काण्ड का प्रथम सूक्त पृथ्वी सूक्त कहलाता है। *माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः* यह राष्ट्रीयता का आदिसूत्र है। भारतीय चिन्तन में राष्ट्र और देशप्रेम विषयक विचारों का सूत्रपात यहीं से हुआ है। शुक्ल यजुर्वेद संहिता में राष्ट्र की सर्वविध अभ्युदय एवं योगक्षेम की कामना की गई है। शुक्ल यजुर्वेद संहिता को यदि 'राष्ट्र-गीत' कहा जाय, तो अत्युक्ति नहीं होगी।

बाल्मीकि रामायण में भारतीय राष्ट्रीयता का सुन्दर परिपाक हुआ है। *जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी* कहकर कवि ने मातृभूमि के प्रति हमारे दायित्व बोध का आख्यान किया है। विष्णु पुराण में कहा गया है कि भारत वर्ष समुद्र के उत्तर में तथा हिमालय के दक्षिण में स्थित है तथा इसकी संतति भारतीय कहलाती है और देवता भी भारतवर्ष का गुणगान करते हैंः *गायन्ति देवाः किल गीतकानि, धन्यास्तु ते भारत-भूमि भागे।* महाकवि कालिदास को हमारे राष्ट्र एवं एवं संस्कृति के गौरव गान के लिए 'राष्ट्रकवि' कहा जाना चाहिए। आसेतुहिमांचल समस्त भारतीय साहित्य में राष्ट्र-चिन्तन की हमारी सुदीर्घ परंपरा रही है। वंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के वन्दे मातरम गीत में उद्याम-राष्ट्रीयता का दर्शन किया जा सकता है। विशद विवेचन हम शोध-पत्र में देखेंगे।

46

वेदो में राष्ट्र के अवधारणाः एक विश्लेषण

डॉ. चन्द्रशेखर उपाध्याय

भोलानाथ महाविद्यालय, धुबरी, असम

chandrashekharu6@gmail.com

राष्ट्र ही जनसमुदाय का परिचय होता है। जैसे पानी मछलियों का आधार होता है, उसी प्रकार राष्ट्र ही हम सभी का आधार है। राष्ट्र सुरक्षित नही रहा तो हम भी सुरक्षित नही रहेंगे। इसिलिए राष्ट्र सर्वोपरि होता है। *वयं राष्ट्रे जागृयामः* (शुक्ल यजुर्वेद 9.23) के अनुसार वैदिक काल मे भी राष्ट्रियता का भावना अच्छी रूप से विराजमान था। राष्ट्रोत्पत्ति के अवधारणा को सुन्दर रूप से दर्शाते हुए वैदिक ऋषि कहते है–*भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे ततो राष्ट्रं बलमोजश्य जातम् तदस्मै देवा उपसन्नमन्तु* (अथर्ववेद–19/41/1)। प्रस्तुत मन्त्र में राष्ट्रोत्पत्तिका इतिहास अथवा सिद्धान्त निहित हैं। फिर राष्ट्र की समृद्धि के लिए हमें कैसे रहना होगा इस पर विचार करते हुए वैदिक ऋषि कहते है–संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते। अर्थात् हमें एक साथ एक मन, वाचा मे समाहित होकर एक साथ चलना जरूरी है। वेद में स्वराज्य मानव का जन्मसिद्ध अधिकार माना गया है जिसको छिन लेने का अधिकार न देवो के पास है न अन्य किसी शक्तिशाली *को-यस्य ते नू चिदादिषं, न मिनन्ति स्वराज्यम् न देवो नाध्रिगुर्जनः*। (ऋ 8.93.11) इस प्रकार राष्ट्र के परिभाषा और राष्ट्र के प्रभुत्व और अखण्डता के लिए मार्गदर्शन वैदिक ऋषियों द्वारा किया गया है। इस शोध पत्र में वेदो मे राष्ट्र इस भावना के उपर प्रकाश डालने की कोशिश की गई है।

47

अथर्ववेद में मैत्री-भावना

चिरंजीत सरकार

शोधछात्र, संस्कृत-विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,

chiranjitsarkar861@gmail.com

चतुर्वेदों में अथर्ववेद अन्तिम एवं अर्वाचीन है। मैत्री-भावना का सर्वप्रथम ऋग्वेद में मिलता है, वही मैत्री-भावना का विकसित रूप अथर्ववेद में देखने को मिलता है। जिसमें परस्पर मित्रता की भावना–हम सदैव प्रेम पूर्वक रहे, हम दोनों का मन एक जैसे हो, हमारी आखें ज्ञान का प्रकाश करने वाली हो। शत्रुता को छोड़कर मित्रता का हाथ बढ़ाना–हम द्वेष करना छोड़ दें और आपस की सब वैर भूला कर मित्रता का हाथ बढाए, समस्त दिशाएँ मेरे लिए शत्रु रहित हो जाये, मै अभय हो जांऊ। भाई-बहन में मित्रता की भावना–भाई-भाई, बहन-बहन और भाई-बहन द्वेष ना करे, एक दूसरे से प्रेमपूर्वक बोले एक ब्रत एक ब्रती हो कर परिवार में प्रेमपूर्वक रहे। पारिवारिक सदस्यों में मित्रता की भावना–वधू अपने सास, श्वसुर, देवर आदि के लिए प्रिय दृष्टि से देखें, वधू सुखदायिनी, सुन्दर मन वाली हो एवं सब लोगों को सम्मान देने वाली हो। वर-वधू में मित्र-भावना–वर-वधू दोनों गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर नियमपूर्वक

जीवन व्यतीत करें, सम्पूर्ण जीवन प्रेमपूर्वक एकसाथ विताए कभी अलग-अलग न हो। शत्रु रहित रहने की प्रार्थना–हे इन्द्र! हम सदैव शत्रु रहित रहें, ऊपर-नीचे, आगे पीछे सब ओर से हमें शत्रु से रहित कर, मुझे समस्तभूत प्रेमपुर्वक देखें एवं मैं समस्त भूतों को प्रेमपूर्वक देखूं। मित्रघाती पुरुष का अधोगति को प्राप्त होना–जो पुरुष कुल स्त्री को गिराता है, जो मित्रघाती है, वह पुरुष अधोगति को प्राप्त होता है। इत्यादि प्रकार से मैत्री-भावना के उदाहरण अथर्ववेद के यत्र-तत्र स्थानों पर सहजता से ही उपलब्ध होते हैं।

48

राष्ट्र-चेतना और वेद

प्रो. दिनेशचन्द्र शास्त्री
गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
dineshcshastri@gmail.com

अपने राष्ट्रीय स्व को भूलकर भारत के अनेक विश्वविद्यालयों के प्रोफेसर यह कहते हुए सुने जाते हैं कि यह देश अंग्रेजी राज्य के पूर्व कभी एक राष्ट्र नहीं था। उक्त भ्रान्त धारणा की समालोचना हम वैदिक पृष्ठभूमि में अच्छी तरह कर सकते हैं। जिसमें वैदिक ऋषि *बृहद् राष्ट्रं संवेश्यम्* की ओर संकेत करते हैं कि जिसमें सारे भूमण्डल के नर-नारी विश्वमानुष की कल्पना को साकार कर सकते थे।इसी को लक्ष्य करके अथर्ववेद मातृभूमि की वन्दना करते हुए, एक ऐसी राष्ट्रभूमि को याद करता है जो भिन्न-भिन्न भाषाओं और धर्मों वाले जन का भरणपोषण एक परिवार के समान करता है। निस्सन्देह, मानवजाति के प्राचीनतम ग्रन्थों से प्राप्त इस दार्शनिक पृष्ठभूमि ने ही हमें एक अनुपम राष्ट्रीय स्व दिया है। उसी का परिणाम था कि इस देश में एक ऐसा राष्ट्रीय समाज खडा कर दिया जिसमें अनेक नस्लों के लोग अपनी–अपनी भाषा बोलते हुए और अपने-अपने धर्म को मानते हुए भी एक राष्ट्रीय समाज बना सके। इस समाज के लोगों को वेदों ने भारत जन कहा है और पुराणों ने भारती संतति अथवा भारती प्रजा कहकर पुकारा। एक सम्पर्क भाषा हुई जिसका नाम संस्कृत था। सारे देश के लिए एक कानून था और अनेकता में एकता का मन्त्र फूंकने वाली एक संस्कृति थी और एक चक्रवर्ती साम्राज्य की लम्बी परम्परा। यजुर्वेद 22/22 में तो स्पष्ट रूप से *आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्* मन्त्र में राष्ट्रीय प्रार्थना मिलती है। और भी बहुत सी बातें वेदों में राष्ट्रीय चेतना से सम्बन्धित मिलती हैं जिनका विवेचन इस पत्र में किया जायेगा।

49

मानवाधिकारः वैदिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ. दिव्या राणा
पी.एच.डी., प्राचीन इतिहास
divyarana4b@gmail.com

मानवाधिकार समकालीन युग के ज्वलंत विषयों में से एक है। मानवाधिकारों का उल्लंघन न केवल समाज की शांति और सद्भाव को बिगाड़ता है, बल्कि देश के विकास के लिए अत्यधिक हानिकारक भी है। सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा भी मानवाधिकार का उल्लंघन देखने को मिलता है। कोविड-19 महामारी के दौरान मानवाधिकार का उल्लंघन देखा गया। मनुष्य के अधिकार की अनादि काल से सभी सभ्यताओं की चिंता रही है। मनुष्य के अधिकारों और अन्य मौलिक अधिकारों की अवधारणा पहले से ही लोगों में विद्यमान रही है। वैदिक युग में जहां तक मानवाधिकार का प्रश्न है तो इस शब्द का उल्लेख वैदिक ग्रंथों में नहीं मिलता, लेकिन कर्तव्यों के आधार पर समाज को चार वर्णों में विभाजित किया गया जिसमें लोगों को अधिकार था कि अपने गुण-कर्म के आधार पर किसी भी वर्ण के कार्य को अपना सकते थे, लेकिन बाद में इसे सीमित कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप, मानव के अधिकारों का हनन शुरु हो गया। जहां एक तरफ, वैदिक ग्रंथों में समता के अधिकार का वाचन मिलता है तथा जीवन को खुशहाल बनाने के लिए अनेक विषयों की शिक्षा उपलब्ध है, वहीं दूसरी तरफ शूद्रों तथा महिलाओं के लिए सीमित दायरा निर्धारित किए जाने का प्रमाण है। वेदों में ऐसी अनेक ऋचाएं भी हैं जिनके अन्तर्गत मानवाधिकार के बीज अन्तर्निहित हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में वैदिक ग्रंथों में स्वतंत्रता एवं समानता की अवधारणा, मानवाधिकार के लिए कैसे उपयोगी हो सकते हैं, इस पर चर्चा की जाएगी।

50

वैदिक साहित्य मे प्रतिपादित एकात्मता की अवधारणा एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता

होमेश्वर उपाध्याय

छात्र, असम विश्वविद्यालय, शिलचर, असम

homeshupadhyaya65@gmail.com

सृष्टि के प्रारम्भ से ही सृष्टि के प्रत्येक उपादान में अनेकता और विविधता परिलक्षित होती आ रही है। लेकिन इन विविधता और भिन्नता मे भी एक ही एकात्मता छिपी हुई है जिसके कारण सभी जीव एक ही सूत्र मे बंधे हुए है और जिसको स्पष्ट करते हुए वैदिक ऋषियों ने कहा है–*ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्* (यजुर्वेद 40.1) इसलिए सभी प्राणियों के अन्दर विराजमान वह सर्वव्यापी परमेश्वर एक ही है, वह द्वितीय अथवा तृतीय नहीं हो सकता– *य एत देवमेकव्रतं वेद, न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते, न पंचमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते* (अथर्ववेद 13.5.14-17)। इस तरह वैदिक ऋषियों ने अनेकता और विविधता से परिव्याप्त इस विश्व में, एक ही चेतन शक्ति जो हम सभी को संचालित कर रही है, का सुन्दर रूप से प्रतिपादन करते हुए कहा है कि ईश्वर ही प्रत्येक में आत्मा के रूप मे अवस्थित है, इस कारण व्यक्ति और व्यक्ति में कोई भिन्नता नही हो सकती, सभी प्राणियों को प्यार की नजर से देखना चाहिए। अर्थात् हम सब एक ही परमात्मा के अंश है और हम सब एक ही है, हममे भिन्नता नही है। आज जिस तरह से समाज मे मानवता की हत्या होती है, हम कह सकते है कि वैदिक ऋषियों द्वारा दर्शाई गयी यह एकात्म भावना प्रेम-करुणा-त्याग-विश्वास और वन्धुत्व से भरे नये विश्व के निर्माण मे अवश्य ही सहायक होगी।

51

अथर्ववेद में मातृभूमि की अवधारणा

काजल ओरान

शोध छात्रा, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय

kajaloraon94@gmail.com

अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त हमारे समक्ष सम्पूर्ण मातृत्व के रुप में परिलक्षित होते है। यहां भूमि को माता के समान माना गया है और स्वयं को पुत्र कहा गया है। मातृभूमि, मातृभाषा और मातृसंस्कृति ये तीनों माता के समान सुख देने वाली हैं। अथर्ववेद के भूमि सूक्त का प्रत्येक मन्त्र मातृत्व से भरा पड़ा हैं। एक माता जिस प्रकार अपने पुत्र का पालन पोषण करते हुये कल्याण की भावना रखती है ठीक उसी प्रकार भूमि सूक्त मे कहा गया है कि हे मां भूमि मुझे कल्याण अवस्था से युक्त करें एवं अपूर्व देय प्रदान करें तथा दूध, गाय, अन्न, हमारी इच्छानुसार धन देकर हमारा सम्वर्धन करें। अथर्ववेदीय भूमि सूक्त में पृथवी पर बसे, ग्राम, नगर, जनपद, पर्वत, नदी, सागर, समस्त चेतन एवं अचेतन समाज का भव्य वर्णन किया गया है। यह भूमि सम्पूर्ण जड़ चेतन जगत का अधिष्ठान है। यह भूमि विविध वीर्यवती औषधियों को धारण करती है। इसमें समुद्र एवं सिन्धु नदी, जल, अन्न, कृषि और सकल प्राणवान गतिशील प्राणीवर्ग सक्रिय हैं। यह भूमि हमारे लिए समस्त पेयों से उपलक्षित सारे उपभोग्य पदार्थ को धारण करती है। भौतिक जगत में माता का जो मातृत्व परिलक्षित होता है उसकी स्पष्ट झलक हमें अथर्ववेदीय इस पृथिवी सूक्त में मातृभूमि के विषय में मिलती है। इस भूमि पर विभिन्न धर्मो, वर्णो एवं भाषाओं के लोग निवास करते है। हमें मातृभूमि की रक्षा के लिए सर्वदा तैयार रहना चाहिए तथा तेजस्वी और पराक्रमी बनकर इसका उपभोग करना चाहिए।

52

वैदिक एवं लौकिक साहित्य में राष्ट्रप्रेम का समीक्षात्मक अध्ययन

खुशबू कुमारी

शोधछात्रा, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली

khushbookumarijnu@gmail.com

सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में उपलभ्यमान राष्ट्र के प्रति अगाढ़ प्रेम को विस्तारपूर्वक विवेचित करते हुए मातृभूमि, मातृसंस्कृति तथा मातृभाषा के प्रति आदर करने की प्रेरणा दी गई है–तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्नमाता पृथिवी

तत् पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना श्रष्णुतं धिष्ण्या युवम्म (ऋ०वे० 1/89/4) इसमें नगरों, नदियों, वनों और पर्वतों के प्रति रागात्मक सम्बन्धों को दर्शाते हुए लोगों के हृदय में स्वराज्य की भावना को भी अभिव्यक्त किया गया है। राष्ट्र-रिपुओं का सर्वदा दमन करने हेतु वैदिकी शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। राष्ट्ररिपु के साथ शठे शाठ्यं समाचरेत् की वेद निहित नीति को कार्यान्वित करने का निर्देश दिया गया है। राष्ट्र रक्षा हेतु सुदृढ़ सैन्य व्यवस्था के साथ–साथ वेदों में निर्दिष्ट एकता तथा संगठन की महत्ता पर विशेष बल दिया गया है। पुराणों में भारतवर्ष के सभी प्रदेशों एवं प्रदेशवासियों में अभिन्नता तथा आत्मीयता के सम्बन्ध के वर्णन के साथ-साथ नदियों, पर्वतों और तीर्थभूमियों में लोगों की आस्था को सुस्पष्ट किया गया है–उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चौव दक्षिणम्।... विन्ध्यश्च पारियात्नश्च सप्तात्नश्च कुलपर्वताःम (वि०पु० 2/3/1–3) रामायण तथा महाभारत में प्रजा के हितार्थ राजा द्वारा राज्य में किए जाने योग्य यथार्थ कार्यादि की रूपरेखा का उल्लेख प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त श्रीमद्भग्वद्गीता में भारतभूमि को विश्व का सर्वश्रेष्ठ राष्ट्र बताते हुए उसकी वरेण्यता, अभिलषणीयता को प्रमाणित किया गया है। भास सहित अन्य कवियों के वीर रस प्रधान ग्रन्थों में भी राष्ट्रिय भावनाओं का वर्णन किया गया है।

53

मुण्डकोपनिषद् में प्रतिपादित मोक्ष

कृष्णकान्त सरकार

शोध–छात्र, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

sarkarkrishnakanta33@gmail.com

सांसारिक बन्धनों से आत्मा का मुक्त होना ही मोक्ष कहलाता है। आत्मा जब मोक्ष पद को प्राप्त हो जाता है, तब वह आनन्द स्वरूप हो जाता है। आत्मा का यह आनन्द स्वरूप ही आत्मा का वास्तविक स्वरूप है और मोक्ष की स्थिति में आत्मा ब्रह्ममय हो जाता है। ब्रह्ममय की स्थिति में आत्मा सारे बन्धनों से मुक्त होकर अमरत्व को प्राप्त करता है। उपनिषदों के ऋषियों ने प्रत्येक मानव के कल्याण हेतु उपनिषदों में मोक्ष प्राप्त करने के लिये अनेक उपायों का वर्णन किया है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पुरुषार्थों में से अन्यतम मोक्ष-पुरुषार्थ को माना जाता है। यह मोक्ष पुरुषार्थ केवल साधक या योगियों के लिये ही नहीं है, अपीतु समग्र मानव जाति के कल्याण हेतु वर्तमान में भी अत्यन्तावश्यक है। इस प्रपत्र के अभिधेयानुसार मुण्डकोपनिषद् में प्रदिपादित मोक्ष प्राप्ति का उपाय, मोक्ष का स्वरूप और मोक्ष प्राप्ति की आवश्यकता आदि विषयों वर्णन किया जाएगा।

54

कर्मबन्धन और कर्ममुक्ति विषयक भारतीय अवधारणा

माधव गोपाल

संस्कृत विभाग, भारती महाविद्यालय

mgopalt@gmail.com

भारतीयदर्शन के विविध सम्प्रदायों में मनुष्य के न केवल निवर्तमान जन्म के अपितु पूर्व जन्मों के कर्मों के महत्त्व को भी बहुत ही व्यवस्थित तरीके से रेखांकित किया गया है। मनुष्य के सुख-दुःख, उसकी सांसारिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियां उसके कर्मों का ही परिणाम स्वीकार की जाती हैं। सामान्य मनुष्य के सारे कर्म उसकी कामनाओं से सञ्चालित होते हैं, जैसा कि आचार्य मनु का कथन है: *अकामस्य क्रिया काचिद्दृश्यते नेह कर्हिचित्। यद् यद्धि कुरुते किंचित्तत्तत्कामस्य चेष्टितम्।* (मनु 2/4)। उसकी यही कामनाएं उसके बन्धन का कारण बनती हैं और कामना के वशीभूत होकर किये गये सारे कर्म उसे कर्मबन्धन में बांधते हैं। भारतीय दर्शन हमें इस कर्मबन्धन से निपटने के लिये कर्ममुक्ति का उपाय बताते हैं। जैसा कि गीताकार का कथन है: *कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।* (गीता 2/47)। इन शास्त्रीय उपायों से मनुष्य न केवल कर्मों से मुक्त हो जाता है, अपितु उसे सारी समस्याओं का समाधान मिल जाता है और वह अपने नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वरूप में सदा के लिये अवस्थित हो जाता है।

भारतीय दर्शनों में कर्मबन्धन को गहराई से समझने हेतु अनेक प्रयास किये गये हैं। प्रारब्ध, सञ्चित और क्रियमाण कर्मों की तीन श्रेणियां बनायी गयी हैं। किन सत् या असत् कर्मों का फल शीघ्र मिलेगा, किन कर्मों के फल में विलम्ब

हो सकता है, इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयों पर दार्शनिक विचार योगसूत्र आदि ग्रन्थों में सुलभ होते हैं। इस शोधपत्र में उक्त सभी विषयों को भी यथोचित तरीके से उपस्थापित करने का प्रयास किया जायेगा।

55

वैदिक साहित्य एवं मानवाधिकारः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. मणिमाला कुमारी

व्याख्याता, प्रा.शि.शि. महा.वि, पटना

mmani2223@gmail.com

भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से ही स्वयं में विशिष्ट और गरिमापूर्ण है। भारतीय संस्कृत केवल मूल्यों की सांस्कृतिक संपत्ति ही नहीं हैं, अपितु भारतीय संस्कृति में प्रारम्भ से ही मानव मात्र की गरिमा और मूल्यों की सुरक्षा के विशेष प्रयत्न किए गए हैं। भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से ही स्वयं में मानवाधिकार के वे अधिकार है जो हमारी प्रकृति या स्वभाव में अन्तर्निहित है, जिनके बिना मानव अपने व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास नहीं कर सकता। इस वैश्विक और सार्वजनिक भावना के तहत, प्राचीन काल से ही संस्कृत वाङ्मय में मानवाधिकारों के अनेक संदर्भ प्राप्त होते हैं। न्याय, समता, बन्धुत्व, आदि मानवीय मूल्य मानवाधिकार के प्राणस्वरूप हैं, जिनका लौकिक साहित्य में रामायण, मृच्छकटिकम्, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, रत्नावली, दशकुमारचरितम्, मेघदूतम्, आदि संस्कृत ग्रन्थों में उल्लेख किया गया हैं। ये मानवाधिकार प्राचीन काल से ही संस्कृत वाङ्मय में बीजरूप में निहित है। इसी प्रकार हमारे धार्मिक ग्रन्थों जैसे–गीता, कुरान, गुरुग्रन्थसाहिब, बाईबिल आदि में मानवाधिकारों का विस्तृत रूप से वर्णन प्राप्त होता हैं।

प्रत्येक मानव के मूल अधिकार हैं–सर्वत्र, सुखी, निरोगी, दुःखविहीन, मानवी सृष्टि की स्थापना हुई। 1948 में 30 अनुच्छेदों में संयुक्त राष्ट्र संघ की सार्वभौम घोषणा विश्व के समक्ष प्रस्तुत हुई, जो वेद उपनिषदों की विचारणा का रूपान्तरण, अनुवाद एवं अनुवाक्यांश मात्र हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में शोधकर्त्री द्वारा वैदिकसाहित्य में मानवाधिकारों का विश्लेषण एवं अध्ययन किया गया है।

56

ऋग्वेद में मानवाधिकार

डॉ. मीना कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, मिराण्डा हाउस

meenakumari1964@gmail.com

वे सभी अधिकार जो किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता तथा प्रतिष्ठा से जुड़े हुए हैं, मानवाधिकार कहे जाते हैं। सरल शब्दों में कहे, तो मानव होने के कारण, उन्हें जो अधिकार प्राप्त होते हैं, वे मानवाधिकार कहे जाते हैं। ये किसी देश की सीमा से बंधे नहीं होते; अपितु ये सार्वभौमिक होते हैं। 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणापत्र जारी किया गया था। इसी दिन से मानवाधिकारों को कानूनी तौर पर मान्यता दी गई थी। भारतवर्ष में 28 दिसम्बर 1993 को मानवाधिकार के संरक्षण हेतु अध्यादेश पारित किया गया। 8 जनवरी 1994 को इसे मान्यता मिली। वर्ष 2006 में इस नियम में संशोधन किया गया। वर्तमान समय में भारत संयुक्त राष्ट्रसंघ की ''मानवाधिकार परिषद्'' का सदस्य है।

मानवाधिकार के अन्तर्गत प्रदूषणमुक्त वातावरण में जीने का अधिकार, अभिरक्षा अर्थात् बचाव में यातनापूर्ण और अपमानजनक व्यवहार न होने सम्बन्धी अधिकार और महिलाओं के साथ सद्व्यवहार का अधिकार सम्मिलित हैं। परन्तु आज के समय में स्थिति यह हैं कि मानवाधिकार के नाम पर अपराधियो, आंतकवादियों और देशद्रोहियों के समर्थन में सभी खड़े हो जाते हैं किन्तु देश के लिए शहीद होने वाले सैनिकों, नक्सलियों की हिंसा का शिकार होने वाले अर्धसैनिक बलों आदि के लिए कोई मानवाधिकारी आवाज नहीं उठाता। ऋग्वेद के विभिन्न मन्त्रों में यह धारणा परिलक्षित होती हैं कि अत्याचारियों और उनके सहायकों के विरुद्ध कठोर कदम उठाने चाहिए। साथ ही मनोवैज्ञानिक रीति से सुधार के योग्य लोगों के विचारों में परिवर्तन लाने का प्रयास भी करना चाहिए।

57

वेदों में राष्ट्र-प्रेम की भावना

डॉ. नन्दिता सिंघवी

डी.लिट्.,सह आचार्य, अध्यक्ष, संस्कृत–विभाग, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

nanditasinghvisns@gmail.com

वेदों में राष्ट्र की न केवल परिकल्पना की गयी है, बल्कि उसके आधारभूत तत्त्व, उपयोगिता, महत्ता तथा उसके प्रति व्यक्तियों के कर्तव्यों का भली-भांति निर्देश दिया गया है।

ऋषियों को यह तथ्य विदित था कि राष्ट्र की एकता, अखण्डता तथा प्रगति तभी तक संभव है जब तक यहाँ के निवासियों में प्रगाढ़ एकता और राष्ट्रप्रेम बना रहेगा। जिस प्रकार माता मनुष्य के लिये पूज्या, आदरणीया और गुरु होती है उसी प्रकार मातृभूमि भी हमारी माता होती है–*माता भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः* (अथर्ववेद, 12/1/12)। मनुष्य को अपनी मातृभूमि से पुत्रवत् प्रेम और आत्मीयता रखनी चाहिए, क्योंकि वह भूमि का पुत्र है। वैदिक ऋषि प्रजा को ही राष्ट्र कहते हैं तथा प्रजा से ही राष्ट्र को श्रेष्ठ बताया गया है। प्रजा राष्ट्र है पशु राष्ट्र है तथा जो कुछ श्रेष्ठ वह राष्ट्र है–*राष्ट्रं प्रजा राष्ट्रं पशवो राष्ट्रयच्छ्रेष्ठो भवति*–(तैत्तिरीय संहिता, 3/4/8/2; अथर्ववेद, 12/3/10–उत्तरंराष्ट्रंप्रजया)। प्रजा के पारस्परिक सौमनस्य तथा राष्ट्रभक्ति व राष्ट्रप्रेम से ही राष्ट्र की समृद्धि वह विकास संभव है। प्रजा जिस प्रकार का आचरण व व्यवहार करती है उसी प्रकार का राष्ट्र बन जाता है। अथर्ववेद (12/1/45) में राष्ट्र-प्रेम की भावना को मनोरम ढंग से प्रस्तुत करते हुए कहा गया कि लोग किसी भी भाषा को बोलें तथा धर्म की उपासना करें, किन्तु समग्र राष्ट्र को गृह के समान समझना चाहिए तभी राष्ट्र समृद्धशाली हो सकेगा।

वैदिक राष्ट्र-प्रेम की अवधारणाओं का ज्ञान मनुष्यों को कराया जाये तथा वेद के प्रति आस्थावान बनाया जाये तभी वर्तमान अलगाववाद, आतंकवाद और उग्रवादियों आदि समस्याओं का समाधान संभव हो सकेगा।

58

वैदिक साहित्य में नारी की वैचारिक स्वतन्त्रता

डॉ. नीलम गौड़

असिस्टैंट प्रोफेसर, ए.आर.एस.डी. कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

neelam.gaur2299@gmail.com

वेद अथाह ज्ञान के भण्डार हैं। कर्म, ज्ञान, उपासना तथा मानव जाति के कल्याण की समग्र विचारधारा वेदों में समाहित है। वेदों में अभिव्यक्त ऋषि-मुनियों का चिन्तन नर और नारी दोनों के लिए यद्यपि समान रूप से हुआ है तथापि नारी के सशक्त स्वरूप को प्रकट करने वाले अनेक उदाहरण वैदिक साहित्य में मिलते हैं। वैचारिक स्वतन्त्रता सामान्यतः व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता को बताती है। वैदिक काल में नारी के सशक्त और सक्षम व्यक्तित्व का कारण उसकी बौद्धिक सम्पदा ही रही है। यजुर्वेद में एक स्थान पर अनेक गरिमायुक्त विशेषणों से सम्बोधित करते हुए नारी को उपदेश करने को कहा गया–*इडे रते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति। एता तेऽघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रूतात्।।* यजु. 8.43 वैदिककालीन आश्रमव्यवस्था के अन्तर्गत गृहस्थाश्रम की धुरी नारी ही है–*गृहिणी गृहमित्याहुः न गृहम् गृहिणीं विना।* नारी और वेद की चर्चा में पारस्करगृह्यसूत्र में कहा गया है कि पाणिग्रहण के बाद लाजाहोम में कन्या अपने लिए अपने मुख से नारी शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग करती है। नारीत्व प्राप्त करते ही वह दो प्रधान आदर्श अपने जीवन के लिए रखती है–1. *आयुष्मानस्तु मे पतिः 2. एधन्तां ज्ञातयो मम।* इस प्रकार के ये आदर्श परमार्थ सार को व्यक्त करते हुए नारी की समृद्ध विचारशक्ति को बताते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में वैदिक साहित्य में प्रयुक्त स्त्रीत्व बोधक कुछ शब्दविशेशों–*नारी, नारि, मेना, जाया, स्त्री, सूनरी, पुरन्धि, पत्नी* आदि के माध्यम से नारी की वैचारिक स्वतन्त्रता का अध्ययन किया गया है।

59

वेद के राष्ट्रिय गीत में प्रतिपादित राष्ट्रोन्नति के मूल तत्त्व

डॉ. निरुपमा त्रिपाठी

एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, कानपुर विद्या मन्दिर महिला महाविद्यालय, कानपुर

nirupamatripathi@gmail.com

आधुनिकतम विचारों के विविध सूत्रों से व्याप्त विश्व के प्राचीनतम ज्ञानकोष वेदों में जीवन के प्रत्येक सन्दर्भों के लिए उपयोगी एवं सार्थक उद्धरण प्राप्त होते हैं। अथर्ववेद के 12वें काण्ड के प्रथम सूक्त जिसे पृथ्वी अथवा भूमि सूक्त कहा जाता है, में राष्ट्र की सुख-समृद्धि की कामना करने वाली प्रजा के लिए अपने कर्तव्यों के निर्वाह की उत्तम शिक्षा दी गई है। इस सूक्त में किसी विशेष कालखण्ड के किसी राष्ट्रविशेष की उन्नति के उपाय नहीं बताए गए हैं, अपितु सामान्य रूप से एक राष्ट्र की कल्पना करके उसके प्रति आदर रखने वाले लोगों के द्वारा करणीय आदर्श कार्यों का उपदेश दिया गया है। इसी कारण इस सूक्त को राष्ट्रिय गीत कहना समीचीन है। भूमि सूक्त के प्रथम मन्त्र में ही सात शक्तियों का उल्लेख है जो किसी भी राष्ट्र को धारण करने के लिए आवश्यक हैं। ये हैं– महान् सत्य, महान् ऋत्, उग्रता, दीक्षा, तप, ब्रह्म-शक्ति तथा यज्ञ। इस काव्यमय सूक्त के माध्यम से किसी भी राष्ट्र की उन्नति के तत्त्वों का ही गहनता से वर्णन किया गया है। मनुष्य की सम्पूर्ण सुख-समृद्धि एवं ऐश्वर्य का आधार भूमि ही है। अतः इसकी महत्ता का गान ही नहीं इसके संरक्षण के उपायों की चर्चा भी आवश्यक है। विवेच्य शोधपत्र में पृथ्वी सूक्त में प्रतिपादित राष्ट्रहित के इन सात तत्त्वों को आधार बनाकर उन्नति के विविध उपायों की नवीन एवं प्रासङ्गिक व्याख्या प्रस्तुत की जाएगी।

60

वेदों में मुक्ति

निशि अरोड़ा

एसोसिएट प्रोफेसर, ए. एण्ड यू. तिब्बिया कालेज एवं हॉस्पिटल, नई दिल्ली

nishiarora_doc@yahoo.co.in

विद् ज्ञाने धातु से वेद शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। इस आधार पर वेद ही मुक्ति का साधन बताने वाले एकमात्र स्रोत हैं। ज्ञान के द्वारा जब अज्ञान का आवरण हटा दिया जाता है, तब शुद्ध जीव पराशक्ति से अपने संबंध को पुनः प्राप्त करता है। यही स्थूलतः एवं सूक्ष्मतया मुक्ति की परिभाषा भी है। उपनिषदों में ज्ञान को मोक्ष का साधन बताया गया है–*ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः*। वस्तुतः ज्ञान से अविद्या का नाश होता है। गंभीर चिंतन करने पर यह भी समझ में आता है कि सभी आस्तिक दर्शन विभिन्न मार्गों से मानव पुरुषार्थ के अंतिम लक्ष्य तक पहुंचते हैं। इसी के साथ साथ आयुर्वेद (जिसे कि पंचम वेद, अथवा अथर्ववेद का उपवेद भी कहा गया है) में भी मोक्ष अथवा मुक्ति की अवधारणा है। प्रस्तुत प्रपत्र में अविद्या और विद्या में भेद स्पष्ट करते हुए आस्तिक दर्शनों में मुक्ति विषय पर प्रकाश डाला गया है। आयुर्वेद एवं श्रीमद्भगवद्गीता में भी मोक्ष के सिद्धांत की विवेचना की गई है। निष्कर्ष स्वरूप में इस लेख में विविध दर्शनों में मोक्ष का अध्ययन तो किया ही है, साथ ही सभी मतों पर मंथन के पश्चात् तारतम्य को समझने का प्रयास भी किया गया है, जिसके फलस्वरूप वेदों में मुक्ति विषय के साथ न्याय करने का सफल उद्यम हुआ है।

61

वैदिक वाङ्गमयः स्वतंत्रता और समानता का प्रेरणास्रोत

डॉ. प्रसून कुमार मिश्र

प्रोड्यूसर–संसद टीवी, संसद भवन, नई दिल्ली

prasunkm@gmail.com

वेदों में स्वतंत्रता और समानता की बात स्पष्ट रूप से कही गई है। वैदिक ऋषि जन–कल्याण के लिए राष्ट्र की परिकल्पना करते हैं। यजुर्वेद के 10वें अध्याय के चौथे मंत्र में स्पष्ट रूप से स्वराज्य की बात कही गयी है। स्वराज स्थ *राष्ट्रदा राष्ट्रमुष्मै दत्त* इसी कड़ी में जनभृत और विश्वभृत दो शब्द भी आए हैं। वेद में जीवन जीने के

लिए स्वराज्य की प्रेरणा मिलती है। स्वराज शब्द का अर्थ है स्व का राज्य। स्व शब्द आत्मा के लिए भी प्रयोग होता है। स्व का राज्य और फिर उसके लिए स्व का तंत्र। क्योंकि राष्ट्र भले ही सांस्कृतिक मूल्यों का वाहक एक परिकल्पना हो लेकिन राजा ऐसा हो जो स्व के अनुरूप तंत्र को स्थापिक कर सके या उसके अनुरूप चला सके। स्वतंत्र या स्वराज के लिए समानता और समरसता की आवश्यकता होती है। इसलिए ऋग्वेद का प्रसिद्ध मंत्र समानता की प्रेरणा देता है–*संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।* साथ ही, *समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्।* यजुर्वेद में कहा गया है *वयं राष्ट्रे जागृह्याम पुराहिताः।* भारत में इन स्वतंत्रता के लिए जितनी बड़ी क्रांति हुई वह विश्व के एक अनूठा उठाहरण है। इन क्रांतियों के पीछे भी वैदिक वाक्यों को ही सहारा था।

वेदिक वाङ्मय में स्वतंत्रता और समानता का भाव जनकल्याण और विश्वकल्याण है जो आत्म कल्याण के शुरू होता है। स्व–राज्य और स्व–तंत्र इसके वाहक हैं। ये दोनों राष्ट्र जैसे सशक्त नियामक तक भाव भरत हैं।

62

कर्म की अवधारणा–वैदिक दृष्टि

डॉ. प्रतिभा शुक्ला

एसोसिएट प्रोफेसर, उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखंड)

pratibhashukla.up@gmail.com

वैदिक वाङ्मय में प्रतिपादित सद्विद्याओं के सदुपयोग के फलस्वरूप मनुष्य सुख प्राप्ति में समर्थ होता है। इसके विपरीत दुःख के गहन गर्त में गिरने की सम्भावना रहती है। वेद में प्रतिपादित कर्म का उपदेश मानव–जीवन को सुखी, समृद्ध एवं शान्तिमय बनाने हेतु परम उपयोगी है। वेद में कर्म शब्द अनेक बार प्रयुक्त हुआ है। अनेक स्थानों पर उक्त शब्द पराक्रम के रूप में (ऋ. 1,22,19), कुछ स्थानों पर इन्द्र के प्रशंसनीय कार्यों की उद्घोषणा अपने शब्दों में करने (ऋ. 1,161,13; ऋ. 1,62,6; 1,101,4; 10,54,4) और कहीं अमरता प्राप्ति हेतु अत्यन्त मूल्यवान सुकृत के अर्थ में वर्णित है। यजुर्वेद में कर्म करने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग ही नहीं है–*कुर्वन्नेवेह कर्माणि...* इत्यादि (यजु. 40, 2)। सामवेद में *भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवाः...* (साम. 9, 18, 74) कहकर सभी इन्द्रियों से शुभ कर्म करने की प्रेरणा की गई है (अथर्व. 3,28,6; 18,2,71)। उपनिषदों में भी कर्म का उपदेश किया गया है। जो कर्म विद्या, श्रद्धा एवं योग युक्त होकर किया जाता है वह प्रबल होता है। (छान्दो. उप. 1,1,2)। मनुष्य पुण्यकर्म से पुण्यवान होता है और पापकर्म से पापी हो जाता है। (वृ.उ. 3,2,13)। प्रस्तुत शोध पत्र में उक्त तथ्यों पर चिन्तन करने का लघु प्रयास किया गया है।

63

वैदिक समाजवाद

डॉ. पुष्पा यादव विद्यालंकार

अध्यक्षा, संस्कृत विभाग, महिला महाविद्यालय पी.जी., किदवई नगर, कानपुर

drpkyadav.py@gmail.com

समं अजन्ति जना यस्मिन् स समाजः–जिसमें सभी व्यक्ति एक होकर गति करते हैं उसे समाज कहते हैं। समाज शब्द छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े समूह का भी वाचक है। यदि मानव समाज शब्द का प्रयोग करते हैं तो उससे समस्त मनुष्यमात्र का ग्रहण होता है। उस मानव समाज को व्यवस्थित रखने के लिये तथा तदन्तर्गत वर्गों में सामंजस्य, संगति, मेल, परस्पर श्रेष्ठ व्यवहार बनाये रखने के लिये व्यवस्थाये के बाद नियम आदि जो ग्रहण या स्वीकार करने पड़ते हैं, वे सर्वमान्य सिद्धान्तों के आधार पर होते हैं। समाजवाद शब्द को हम समष्टिधर्म, मानवधर्म या समाजधर्म भी कह सकते हैं। वर्तमान में इस 'समाजवाद' शब्द को सोशिएलिज्म या कम्युनिज्म शब्द से ग्रहण किए जाने वाले अर्थों या परिभाषाओं में बंधा मान लिया गया है किन्तु जब हम वेद से समाजवाद का प्रतिपादन करते है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक समाजवाद के सिद्धान्त सोशिएलिज्म या कम्युनिज्म के जन्म से पूर्व के सिद्धान्त है जो सृष्टि के प्रारम्भ से ही वेदमन्त्रों में समाहित है। वैदिक दृष्टि समाजवाद से ओतप्रोत है। अनेक मंत्रों में इनका स्पष्ट एवं सुन्दर रूप में वर्णन प्राप्त होता है। वेद मन्त्रों में बहुवचन सर्वनाम शब्दों का स्थान-स्थान प्रयोग समष्टिवाद या समाजवाद के आधारभूत सिद्धान्तों का द्योतक है–*धियो यो नः प्रचोदयात्: वयं स्याम पतयो रयीणाम, अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्* आदि पदों में बहुवचन वाची सर्वनाम शब्द *नः, वयं अस्मान् समष्टि,* समाज या समूह वाची है। अतः वेद समाजवाद का परम पोषक है।

64

नारी की स्वतन्त्रता एवं समानताः वैदिक साहित्य के परिप्रेक्ष्य में

डॉ० संगीता कुमारी

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत एवं वेदाध्ययन विभाग, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार

kmrsangeeta1@gmail.com

आज से लगभग 4,500 वर्ष पहले के वैदिक समाज में नारियों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि सभी क्षेत्रों में स्वतन्त्रता एवं समानता का अधिकार प्राप्त था। वैदिक वाङ्मय में नारी के सामाजिक अधिकार और कर्त्तव्य का विशद् रूप में वर्णन है। नारी को परिवार की स्वामिनी बताते हुए कहा गया है कि वह सास-ससुर, देवर और ननद आदि की सम्राज्ञी होती है। तत्कालीन समाज में नारियों को भी पुरुषों के समान ही धार्मिक अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद के साथ ही अथर्ववेद में भी नारी के अधिकार एवं कर्त्तव्य के विषय में बताया गया है कि पति के साथ बैठकर यज्ञार्थ स्रुवा (चम्मच) लेकर यज्ञ करे। वैदिक काल में नारियों को भी पुरुषों के तुल्य शिक्षा–दीक्षा का समान अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद के एक सूक्त में शची (इन्द्राणी) का कथन है–*अहं केतुरहं मूर्धा–ऽहमुग्रा विवाचनी। ममेदनु क्रतुं पतिः, सेहानाया उपाचरेत्।।* (ऋग्वेद 10.159.2) वैदिक वाङ्मय में नारी के राजनीतिक अधिकार एवं कर्त्तव्य भी बताए गए हैं। नारी को सदा जागरुक रहने की शिक्षा दी गई है। वैदिक वाङ्मय में नारी के आर्थिक अधिकार और कर्त्तव्य भी बताए गए हैं। अविवाहित पुत्री को पुत्र के बराबर दाय भाग का अधिकारी बताया गया है। इस प्रकार, वैदिक साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ कभी पुरुष से पीछे नहीं थीं। ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है–*सतीनां पादरजसा सद्यः पूता वसुन्धरा।*

65

वेदों में वर्णित समाजवाद

डॉ. शालिनी मिश्रा

प्रवक्ता, संस्कृत, पं. लालता प्रसाद रामकृष्ण महाविद्यालय, पारा, मौरावां, उन्नाव

tripathisalini@gmail.com.

विश्व में अनेकानेक वाद प्रचलित है, इनमें से साम्यवाद, समाजवाद, त्यागवाद, भोगवाद, आस्तिकवाद, नास्तिकवाद, बहुदेव वाद व एकेश्वरवाद इत्यादि। वेद ही इन सबका उद्गम स्थल है, पक्ष विपक्ष के सभी रूपों का वेदों में चित्रण है। यहां पर हमने समाजवाद का प्रतिपादन किया है कि किस प्रकार से यह (समाजवाद) वेदों में प्रतिबिम्बित है। वेद मनुष्य को नही वरन समाज को प्रमुखता देता है। समाज किस प्रकार सुख-सम्पन्न तथा समभाव युक्त बने इस विषय में वेदों में कुछ विचार उपलब्ध है। वेद सम्पूर्ण समाज के उत्थान की बात करता है। कर्तव्य के रूप में तो व्यक्तिगत कार्य का उपदेश है, किन्तु फल की दृष्टि से सम्पूर्ण समाज को ही दृष्टि में रखा गया है। वेद के प्रारम्भ में ही हमें यह भावना दृष्टिगत हो जाती है। वेद समानता का भी प्रतिपादन करता है। इसी का नाम समाजवाद है। वैदिक समाजवाद का उद्देश्य है कि आपस में द्वेष न करके सर्वजन परस्पर मैत्री की भावना का व्यवहार करे। जब तक समाज सहअस्तित्व की भावना को नहीं अपनाएगा तब तक वह सुखी नही हो सकता। इस प्रकार विश्व का प्रत्येक मानव वैदिक समाजवाद की परिधि में आ जाता है, वेद समान रूप से मानव मात्र के कल्याण तथा उत्थान की बात सोचता है, किसी वर्ग विशेष की नहीं, वेदों में कहे गये वैयक्तिक तथा सामाजिक अधिकार एवं कर्तव्य सभी के बराबर है, इसमें किसी प्रकार का भेद नही है, वैदिक समाज का यह आदर्श स्वरूप है।

66

यजुर्वेद में स्वराज्य की परिकल्पना

डॉ. शशि तिवारी

अध्यक्ष, वेव्स (भारत) एवं पूर्व आचार्य, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

shashitiwari_2017@yahoo.com

यजुर्वेद में राष्ट्र विषयक भरपूर सामग्री प्राप्त होती है। ऐतरेय ब्राह्मण में जिन आठ प्रकार के राज्यों का उल्लेख हुआ है उनमें स्वराज्य एक है। इसी अर्थ में यजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता में जानराज्य शब्द का प्रयोग हुआ है

जानराज्य यानी जन का राज्य। प्रजा और पशु इसके अभिन्न अंग है। अविद्वेष, कल्याण-भावना, मैत्री, और सुरक्षा राष्ट्र को पुष्ट करते हैं। राष्ट्र प्रजा को धारण करता है और राजा को प्रतिष्ठित करता है। वैदिक स्वराज्य का आदर्श है कि राजशक्ति और प्रजाशक्ति में कभी वैमनस्य न बढ़े। आकांक्षा व्यक्त की गई है कि 'हे राजन् प्रजाजन तुझे न मारे और तू भी प्रजाजन को न मार' (यजुर्वेद 20/1)। राजा और प्रजा का अच्छा संबंध सुराष्ट्र की आधारशिला है। प्रजां पुष्टिं वर्धयमानः (यजुर्वेद 9/25)–राजा की वास्तविक व्याख्या है।

67

आध्यात्मिकता तथा आत्मप्रबन्धन का अन्तः सम्बन्धः योग दर्शन के सन्दर्भ में

डॉ. श्रुति राय

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय

shrutijnu@gmail.com

भारतीय दृष्टिकोण से आत्मप्रबन्धन तथा आध्यात्मिकता (आध्यात्मिक उन्नति) एक ही सिद्धान्त के दो अभिन्न पक्ष हैं। किसी भी मुमुक्षु के लिये आत्मप्रबन्धन उसकी आध्यात्मिक जगत् की आधारभूमि है। स्वयं में प्रबन्धित व्यक्ति ही मोक्ष जैसे दुःसाध्य लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है। योगसूत्र में कैवल्यप्राप्ति के लिये योगप्राप्ति का सिद्धान्त स्थापित करते हैं। ध्यातव्य है कि योग अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध किसी भी व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति का प्रथम सोपान है तथा चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियों का पूर्णतया निरोध योग की पराकाष्ठा है और वही कैवल्य का करण है। अतः योगसूत्र के समाधि पाद नामक प्रथम अध्याय तथा साधन पाद नामक द्वितीय अध्याय में योग का स्वरूप तथा उसके साधनश्र का वर्णन है। इन अध्यायों में चित्तवृत्ति के निरोध के लिये साधकों के स्तर को ध्यान में रखकर अलग अलग साधनों का वर्णन किया गया है। जैसे–प्रथम अध्याय में अभ्यास, वैराग्य, ईश्वरप्रणिधान का, द्वितीय अध्याय में तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान, अष्टांगयोग का वर्णन हैं। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये तत्त्व आध्यात्मिकता तथा आत्मप्रबन्धन के बीच के अभिन्न सम्बन्ध को स्थापित करते हैं।

अतः इस शोधपत्र में योगसूत्र में वर्णित योग की परिभाषा, तथा योग के साधनश्र के माध्यम से आध्यात्मिकता तथा आत्मप्रबन्धन के अन्तर्सम्बन्धो की परीक्षा का प्रयास किया गया है।

68

वेदों में राष्ट्र एवं राजा का स्वरूप

शुभम कुमार पाण्डेय

शोधछात्र, वेद–विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

shubhampandey14395@gmail.com

वैदिक साहित्य विश्व के सभी साहित्यिक ग्रन्थों में अतिप्राचीन साहित्य ग्रन्थ है तथा उसमे वर्णित राष्ट्र एवं राजा से संबंधित विषय भी अतिप्राचीन एवं महत्वपूर्ण है। वर्तमान परिपेक्ष में वैदिक ज्ञान प्राचीन होते हुए भी नूतन को परिलक्षित करता है तथा राष्ट्र के प्रति उपयोगी भी साबित होता है। जैसे–राष्ट्र कैसा हो? राजा कैसा हो? प्रजा कैसी हो? इत्यादि। इसके उत्तर में वेद-वचन है कि *वयम् राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः* (अर्थात हम सभी राष्ट्र के बारे में सतत जागरूक रहें) परिवार में भाई-भाई मिलकर रहें। समाज में संगठित रहें। परस्पर मानसिक सांमनस्य में रहें। राष्ट्र की आधार नारियाँ सुभग रहें। ब्राह्मण ब्रह्म-वर्चस्व युक्त, क्षत्रिय महारथी रहें, कृषि और वाणिज्यवान हों। सभी लोग कर्मयोगी, ज्ञानयोगी तथा भक्तियोगी बनें। पशुओं का आधिक्य हो। सारी अमोघ औषधियों से पृथ्वी पटी रहे। पर्यावरण विशुद्ध रहे। देवों की हम पर अहैतुकी कृपा बरसती रहे। हम सहज बने रहें। राजा भी सत्य और तप से राष्ट्र की रक्षा करे। चोरी, हिंसा, मिथ्याडम्बर का बोलबाला न रहे। जल-थल-नभ में हमारी अप्रतिहत गति बनी रहे। वाणी मधुमय, शरीर आरोग्य और मन-चित्त शुद्ध हों। प्रभु का दिव्य प्रकाश बुद्धि में होता रहे जिससे काम-क्रोध-लोभ इन विविध नरकद्वारों से होकर हम न गुजरें।

सम्पूर्ण विश्व नीड़ की भांति हो जाय इत्यादि। प्रस्तुत लेख में वैदिक राष्ट्र की अवधारणा को प्रस्तुति किया जायेगा।

69

महर्षि दयानंद सरस्वती का स्वतंत्रता व समानता पर वैदिक चिन्तन

आचार्य (डॉ.) श्वेत केतु शर्मा

पूर्व सदस्य, हिन्दी सलाहकार समिति, भारत सरकार

shwetketusharma@gmail.com

महर्षि दयानंद सरस्वती आधुनिक भारत के महान चिन्तक, समाज–सुधारक, तथा आर्य समाज के संस्थापक थे। वेदों की ओर लौटो यह उनका प्रमुख नारा था। स्वामी दयानन्द ने वेदों का भाष्य किया इसलिए उन्हें 'ऋषि' कहा जाता है क्योंकि *ऋषयो मन्त्र दृष्टारः* (वेदमन्त्रों के अर्थ का दृष्टा ऋषि होता है)। उन्होने कर्म सिद्धान्त, पुनर्जन्म, ब्रह्मचर्य,सामाजिक समानता, स्वतंत्रता, मुक्ति व मोक्ष सिद्धांत, स्वराज्य की स्थापना को अपने दर्शन का स्तम्भ बनाया। उन्होने ही सबसे पहले 1856 में 'स्वराज्य' का नारा दिया जिसे बाद में लोकमान्य तिलक ने आगे बढ़ाया। स्वतंत्रता व समानता की वैदिक अवधारणा स्वामी दयानंद के विचारों में मूल रूप में थी। महर्षि दयानंद ने वेदों के आधार पर मनुष्यमात्र में समानता के विचारों से समाज को जागृति प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया जैसे–*अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय*। पराधीन आर्यावर्त (भारत) में यह कहने का साहस सम्भवतः सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही किया था कि आर्यावर्त (भारत), आर्यावर्तियों (भारतीयों) का है। हमारे प्रथम स्वतन्त्रता समर, सन् 1857 की क्रान्ति की सम्पूर्ण योजना भी स्वामी जी के नेतष्त्व में ही तैयार की गई थी और वही उसके प्रमुख सूत्रधार भी थे। इस प्रकार देश की स्वतंत्रता व समानता के लिये महर्षि दयानंद ही पहले व्यक्ति थे जिन्होने स्वराज्य की स्थापना का उद्घोषण किया था। अतः महर्षि दयानंद सरस्वती का समानता व स्वतंत्रता पर वैदिक चिन्तन आध ाारित है, जिससे समाज व राष्ट्रोन्नति संभव है।

70

वैदिक ग्रंथों में विद्यमान मानव के अधिकार और कर्तव्य

डॉ. सुप्रिया संजु

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत, अमिटी यूनिवर्सिटी, हरियाणा

ssanju@ggn.amity.edu; supriyasanju@gmail.com

किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और सम्मान का अधिकार ही मानव अधिकार है। मनुष्य योनि में जन्म लेने के साथ मिलने वाला प्रत्येक अधिकार मानवाधिकार की श्रेणी में आता है। मानवाधिकार महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे लोगों के लिए सम्मान के साथ जीने के लिए आवश्यक न्यूनतम मानकों को दर्शाते हैं। इसका कारण यह है कि ये ऐसे अधिकार हैं जो सीधे प्रकृति से सम्बन्ध रखते हैं जैसे जीने का अधिकार केवल कानून सम्मत अधिकार नहीं है बल्कि इसे प्रकृति से प्रदान किया गया है। सभी व्यक्तियों को गरिमा और अधिकारों के मामले में जन्मजात स्वतंत्रता और समानता प्राप्त है। वैदिक ग्रथों में *वसुधैव कुटुम्बकम्* की अवधारणा की संकल्पना कर भारतवर्ष के प्राचीन ऋषिमुनियों पृथ्वी पर मानवता का विकास किया। इसके माध्यम से उन्होंने यह सन्देश दिया कि सभी मनुष्य समान हैं। और सभी का कर्तव्य है कि वे परस्पर एक-दूसरे के विकास में सहायक बनें, जिससे मानवता पुष्पित और पल्व्वित हो। *वसुधैव कुटुम्बकम्* का दर्शन एक समझ को विकसित करता है कि पूरी दुनिया एक परिवार है। *सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।* के द्वारा वैदिक काल से ही सभी सुखी होवें, सभी रोगमुक्त रहें, सभी का जीवन मंगलमय बनें और कोई भी दुःख का भागी न बने, ऐसी कामना की जाती है। इसके अतिरिक्त वर्ण और आश्रम व्यवस्था के साथ मानव के क्या कर्तव्य है इसकी भी विस्तार से वैदिक ग्रंथों में विवेचना की गई है।

71

वैदिक परिप्रेक्ष्य में सत्य, समानता तथा विश्व-बंधुत्व की अवधारणा

तुषार मुखर्जी

पूर्व वैज्ञानिक, अटोमिक एनर्जी विभाग, मुम्बई

tm19621970@yahoo.co.in

वैदिक ग्रंथों में सत्य, समानता तथा विश्व–बंधुत्व की शिक्षा है। *दृष्ट्वा-मधु* (यजुर्वेद 19.77) में सत्य और असत्य को ज्ञानदृष्टि से पृथक करके असत्य में अप्रीति एवं सत्य में प्रीति रखने की शिक्षा है। *अनुव्रतः-शन्तिवाम्* (अथर्ववेद

3.30.2) में पुत्र को माता-पिता का आज्ञाकारी होने तथा स्त्री को पति के प्रति सदा मधुर भाषी होने की शिक्षा है तथा *मा-भद्रयाम्* (अथर्ववेद 3.30.3) में भाइयों एवं बहनों का आपस में प्रेम से रहने की शिक्षा है। *साम्राज्ञ्येधि–श्वश्र्वाः* (अथर्ववेद 14 1 44) में पत्नी को परिवार में साम्राज्ञी मानने की, *संहोत्रं-उत्तरः* (अथर्ववेद 20.126.10) में जीवन के हर क्षेत्र में स्त्रियों की बराबरी की शिक्षा है। विश्व के बाकी धर्मों में ईश्वर को केवल पुरुष-रूप माना गया है, जबकि वेदमंत्र अहं–भूर्ज्यावेशयन्तीम् (ऋग्वेद 10.125.3) में सृष्टिकर्ता ईश्वर को मातृ-रूप भी माना गया है। उदीर्ष्व-बभूथ (अथर्ववेद 18.3.2) से पता चलता है कि वैदिक युग में सती प्रथा थी ही नहीं। *समानि-नाभिमिवाभितः* (अथर्ववेद 3.30.6) में मनुष्यों को साथ-साथ अन्न ग्रहण की, *सं गच्छध्वं-उपासते* (ऋग्वेद 10.191.2) में सब को परस्पर मिलकर जीने की, *ते-समीक्षामहे* (यजुर्वेद 36.18) में सभी प्राणियों को मित्र भाव से देखने की तथा *यस्यं-भर* (ऋग्वेद 8.45. 42) में सम्पूर्ण विश्व को अपना कुटुंब बनाने की शिक्षा है। *यो-यन्त्यन्या* (यजुर्वेद 17.27) में धार्मिक उदारता की शिक्षा है। वैदिक विचारों के अनुसरण से समाज एवं विश्व के वैमनस्य-हिंसा रहित होना संभव है, सत्य-समानता आधारित भेदभाव रहित भातष्त्व भाव युक्त सौहार्दपूर्ण समाज की स्थापना हो सकती है।

72

वैदिककालीन शिक्षा में निहित स्वतंत्रता, समानता के विविध रूप एवं पाश्चात्यों द्वारा वैदिक शिक्षा का विकृतिकरण

वशिष्ठ बहुगुणा

शोध-छात्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, दिल्ली

vashishthbahuguna68@gmail.com

शिक्षा सार्थक मानवीय जीवन के लिए उद्देश्यपूर्ण समाजिक प्रक्रिया है। यह समाजजीवन में निरंतर चलती रहती है। जो व्यक्ति को समाज से जोड़ने एवं समाज में जीवन निर्वाह हेतु मूलभूत ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि कर उसे एक सुयोग्य नागरिक के रूप में स्थापित करने में महनीय भूमिका निभाती है। स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि "मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।" भारत में शिक्षा मानवीय जीवन के आरंभ से सतत रूप से प्रवाहमान रही है। संसार का प्रथम ग्रंथ ऋग्वेद भारतभूमि पर ही लिखा गया। वैदिक साहित्य भारतीय मानस की साक्षात् अभिव्यक्ति है। शिक्षा का प्रथम निदर्शन हमें वैदिक साहित्य में ही प्राप्त होता है। आज की भौतिक शिक्षा के विपरीत वैदिककालीन शिक्षा का उद्देश्य मानव के बाह्य एवं आतंरिक दोनों पक्षों के विकास पर आधारित था। बाह्य से अभिप्राय जहाँ भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक कौशल एवं ज्ञान से था वहीं आंतरिक विकास का तात्पर्य मानव जीवन के अंतिम उद्देश्य की प्राप्ति से था। वैदिककालीन शिक्षा मानवीय व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास पर केंद्रित थी। मानव का मानव से ही नही अपितु मानव का प्रकृति तथा जीव से कैसे व्यवहार होना चाहिए इस पर भी वैदिक शिक्षा विचार करती थी। अठाहरवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से पश्चिमी षड्यंत्रकारियों ने इस शिक्षा की समाप्ति हेतु अनेक षड्यंत्र रचे। यह शोधपत्र वैदिककालीन शिक्षा में निहित स्वतंत्रता, समानता के विविध रूपों के साथ पाश्चात्यों के वैदिक शिक्षा के विकृतिकरण के षड्यंत्रों को उजागर करेगा।

73

समानता की वैदिक अवधारणा एवं आधुनिक विश्व

डॉ. योगेश शर्मा

सहायक आचार्य, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

yogeshshrm88@gmail.com

आज संसार में अनेक समस्याएं विद्यमान हैं जो कि मानव जाति के लिए विनाश का कार्य कर रही हैं। यहां प्रश्न यह उठता है कि इन समस्याओं का निराकरण कैसे किया जाए? इसका समाधान विश्व की सबसे प्राचीन धरोहर वेदों में प्राप्त होता है जिनमें ऋषियों ने बड़े ही शोध और विचारपूर्वक कुछ सिद्धांत व विचारों को मंत्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया। जो कि आज के इस भौतिक, विकसित व तथाकथित वैज्ञानिक युग में भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने कि प्राचीन समय में थे। जैसे कि–*मा भ्राता भातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा। सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत* भद्रया। (अथर्ववेद–3/30/3) *समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।* (ऋग्वेद–10/191/4) इन मंत्रों में प्रतिपादित समानतापरक सिद्धांत या विचार को संसार का कोई भी मनुष्य यदि अपने आचरण में लाता है तो निश्चय ही वह एक श्रेष्ठ मनुष्य बनने की दिशा में एक सोपान और आगे बढ़ जाता है। प्रस्तुत शोध-लेख में आधुनिक समय में विश्व के में व्याप्त समस्याओं का निराकरण समानता नामक वैदिक अवधारणा से कैसे किया जा सकता है इस पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जाएगा।

74

उपनिषत्साहित्ये स्वतन्त्रतासमानतयोः मौलिकतत्त्वानि

डॉ. डि.वेणुगोपालरावः

सहायकाचार्यः, शिक्षाशास्त्रविभागः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, गुरुवयूर परिसरः

mohanamurari2011@gmail.com

स्वराज्यं, स्वतन्त्रता, स्वाधिकाराः, समानता, स्वमातृभूमिः, मानवाधिकारः, कर्तव्यता, स्वोत्तरदायित्वानि, प्रजातान्त्रिकता, मानवीयता, समभावना, सहृदयता, ऐक्यभावना, अहिंसा, सत्यं, धर्मः, आध्यात्मिकता, प्रकृतिः, राष्ट्रियता इत्याद्यनेकान्य–द्वितीयमूल्यानि स्वास्तित्वे समासाद्यैवाधुना समेभ्यः देशेभ्यः भारतं विश्वगुरुत्वेनादर्शदेश इव वर्तत कथने न विप्रतिपत्तिः। स्वतन्त्रता समानतेति पदद्वयं मानवलोकाय स्वास्तित्वप्रतिबिम्बाय शक्तिप्रदं भवति। वस्तुतः मानवाधिकाराः इत्ययं कश्चन सार्वजनिकशब्दः भवति। यथार्थः, न्यायः, श्रेष्ठः, निश्चितं, कर्तव्यता, उत्तरदायित्वं, स्वतन्त्रता, साध्यता, युक्तता, सत्यसन्धता, अर्हतेत्यद्येनेकार्थेष्वधिकार इति शब्दः संस्कृतसाहित्ये प्रयुक्तो दृश्यते। अयमधिकारः इति शब्दः पाश्चात्यैरपि Justice, Privilege, Power, Prerogative इत्यादिशब्दैः प्रयुक्तो वर्तते। स्वतन्त्रता, समानता इत्येतावुभावपि शब्दौ मानवाधिकारेषु मुख्यौ श्रेष्ठौ चाधिकारौ भवतः। मानवाधिकारा एव प्राचीनभारते राजधर्माः, राजाज्ञाः, शासनानि, राजादेशाः, चातुर्वर्ण्यधर्माः, शासनाधिकारा इति सामाजिकानां जीवने आसन्। निर्देशाः, आदेशाः, शासनानि, आज्ञाः, सम्प्रदायाः, परम्पराः, विश्वासाः, सिद्धन्ताः, सनातनधर्माः, संस्काराः इति बहुधा भारतीयसाहित्ये आधिकारिकविचाराः विवृतासन्ति। चाणक्यप्रभृतयः स्वराज्यप्राप्तये स्थिरीकरणे च शतं प्रतिशतं स्वाधिकारभावनाभिरेव जिताश्चाभवन्।

संस्कृतसाहित्यं भारतीयसस्कृतस्य, संस्कृतेः, समाजस्य च दर्पणवत्तिष्ठिति। तत्र वैदिकसाहित्यं सर्वाधारमिति जगद्विदित एवांशः। स्वतन्त्रता समानतेति मानवाधिकारयोः मूलसङ्कल्पस्तु सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै, तेजस्विनावधीतमस्तु माविद्विषावहै इति वैदिकसाहित्यधीन एव। इत्थं वसुधैककुटुम्बकभावनया वैदिकैः स्वतन्त्रतासमानतयोः ये मानवाधिकारसङ्कल्पाः गूढतया तत्साहित्ये सृष्टाः ते अस्मिन् शोधपत्रे प्रमाणपुरस्सरं निरूप्यन्ते।

75

राजाचयनम्

हरिश्चन्द्र होता

एसो प्रो, संस्कृत विभाग, सिद्धार्थ डिग्री महाविद्यालय, बिम्का, सुबर्णपुर

harishhota15@gmail.com

सर्वेषु समाजेषु प्रजानां शासनस्यावस्यकता प्रत्यक्षं विद्यते। शासनस्य मूलस्रोतः पुरा राजा वभुव। राजकीय व्यवस्थायाः विपुलपरि प्रजापरिपालनं धर्मसंस्थापनं पापानां निग्रहणं शान्तव्यवस्था स्थापनं इत्यस्य कृते राज्ये राज्ञो नियुक्ति अनिवार्यः।

राज्ञो गुणसम्पत्–ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्र वि रक्षति। (अथर्व वेद) उपनिषद् काले कतिपयनृपा जनकादय प्रमुखा परमदार्शनिकाः आसन्। ते च विनयसंपन्ना आसन्। रघुवंशम् महाकाव्येऽपि कालिदासेन निगदितं *प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणा भरणादपि। स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः।।* परमदार्शनिका वभूवुः विद्याविनतो राजा हि प्रजानां विनये रतः। अनन्यां पृथिवीं भुङ्क्ते सर्वभूतहिते रतः। महाभारते निगद्यते *संग्रहश्चौव भूतानां दानं च मधुरा च वाक्। अप्रमादश्च शौचं च राज्ञो भूतिकः महत्। गुणवान् शीलवानदान्तो मृदु धर्मो जितेन्द्रियः। सुदर्शनं स्थुललक्ष्म्यश्च न भ्रश्येत सदा श्रीयः।।* (शान्तिपर्वणि 92.50) राज्यस्यसप्तङ्गस्य विपरीतंयः आचरयति सो हन्तव्यः। सप्ताङ्गस्य च राज्यस्य विपरीतं यः आचरेत्। गुरवो यदि वा मित्रं प्रतिहन्तव्य एव सः। राज्ञः नियुक्तिःशास्त्रानुसारं प्रतिपालनमासीत्। मन्वादीनांशास्त्रंवैदीकशास्त्रानुसारं दण्डविधानानि ते स्वीकृतवन्तः। महाभारते निगद्यते। *कालस्यकारणं राजा राजा वा कालकारणम् इति तेसंशयःमाभूत्राजा कालस्य कारणम्।।*

76

वैदिक वाङ्मये मानवाधिकार चिन्तनस्य वर्तमानपरिप्रेक्ष्ये प्रासंगिकता

प्रो. कमलाभारद्वाजः

पूर्वाचार्या, श्रीलालबहादुरशास्त्री, नेशनलसंस्कृतविश्वविद्यालयः, दिल्ली

kamlabhardwaj55@gmail.com

वर्तमानयुगे मानवजीवने मूल्यबोधो यथा यथा क्षीयते तथा तथा जीवनस्य प्रायः सर्वेष्वपि पारिवारिक-सामाजिकसांस्कृतिकधार्मिकादिक्षेत्रेषु अधिकारस्य विषयः प्रमुखत्वं भजते।समस्येयं नाद्यतनीया अपितु वैदिककालादेव द्रष्टुं शक्यते। तत्सर्वमनुभूय ऋषयः आरम्भादेव मानवाधिकार रक्षणाय सन्द्धाः जाताः विशेषतःवैदिकवाङ्मये मानवाधिकाररक्षणस्य चिन्तनं दरीदृश्यते। भारतीयचिन्तन परम्परायां कर्तव्यप्रधानत्वात् शास्त्राणि प्रत्यक्षतः मानवमात्रस्य कर्तव्यबोधायैव प्रवृत्तानि तथापि कर्तव्यबोधे सति अधिकाररक्षणं स्वतः एव जायते। वेदेष्वपि मानवजीवनस्य सर्वविध कल्याणाय, मानवजीवनविकासाय, संरक्षणाय,पोषणाय च चिन्तनं विद्यते। ऋग्वेदे उल्लिखितं यत्प्रजायै हितकरः मानुषः, प्रजायै अहितकरश्च अमानुषः व्यवहारः। मानवाधिकाराय वेदेषु विश्वबन्धुत्वम्, विश्वस्यैक्यम्, मानवीयसमत्वाय च प्रेरकानि तत्वानि निरूपितानि। वैदिक समाजे व्यक्तिगताधिकाराणाम् अपेक्षया सामूहिकाधिकाराः महत्वाधायिनः।

वसुधैव कुटुम्बकम्, संगच्छध्वं संवदध्वं सदृशवेदवचनान्येतानि समत्वप्रतिपादनद्वारा मानवाधिकाररक्षणपराण्येव, परं परवर्तीकाले मानवाधिकाराणां स्वरूपं छिन्नं जातम्। परिणामतः मानवाधिकाराणां संरक्षणाय अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षायै शान्ति स्थापनार्थं संयुक्तराष्ट्रसंघेन मानवाधिकारसंरक्षणाधि-नियमः प्रस्तुतः।

अधिनियमेस्मिन् प्रारम्भिक- नागरिक-राजनैतिक-आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-मानवाधिकाराः मूलभूतस्वातन्त्र्यविषये च केचन प्रतिबन्धाः इति प्रतिपादितम्। शोधपत्रैस्मिन्स्वातन्त्र्यस्य समत्वस्य, विवाहस्य परिवारविस्तारस्य, शिक्षायाः सामाजिकाद्यधिकाराणां विषये वैदिकवाङ्मये प्रतिपादितायाः चिन्तनपरम्परानुसारं विचाराः प्रस्तूयन्ते। वैदिक-चिन्तनस्य प्रासंगिकत्वविषयैपि चिन्तनं विधास्यते।

77

मुख्योपनिषत्सु वाक्स्वतन्त्रतायाः अवधारणा

लोपामुद्रा गोस्वामी

शोधछात्रा, कुमारभास्करवर्मसंस्कृतपुरातनाध्ययनविश्वविद्यालयः, असमप्रदेशः

loopamudragoswami03@gmail.com

भारतीयसंविधाने स्वतन्त्रतयाः अधिकारः मुख्याधिकारेषु सम्मिलितोऽस्ति। संविधानेऽस्मिन् 19 तमः क्रमांकः वाक् तथा अभिव्यक्तेः स्वतन्त्रतामधिकुरुतः। परन्तु एषा धारा संविधाने न अर्वाचीनभारतीयपरिप्रेक्षे अन्तर्भूक्ता जाता, इयं धारा वेदकालादेव प्रवाहमाना दृष्टा। वयं तु वेदेषु पुराणेषु इतिहासग्रन्थेषु सर्वत्र प्राचीनप्रसिद्धसंस्कृतरचनासु वागधिकारस्य दृष्टान्तं पश्यामः। उच्यते च ऋग्वेदे (1.164.64)–*एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति* इति। प्राचीनार्चायस्तु एकमेव विषयं भिन्नतर्केण उपस्थापयन्ति। उपस्थापनावसरे प्राचीनाचार्याणां खण्डनमपि तैः कृतं न तत्र दोषाः आसन्। तत्र सर्वत्र सर्वेषां स्वाभिव्यक्तेः स्वतन्त्रता आसीत्। न्यायदर्शने तु अक्षपादाचार्यः कथं नु स्वमतमुपस्थातव्यमित्यवसरे प्रमाणादि षोडशपदार्थानामुल्लेखयति सः। इतोऽपि स्वमतमुपस्थापनाय एव प्राचीनकाले शास्त्रार्थस्यापि प्रचलनमासीत्। दृश्यते च दर्शनग्रन्थेषु श्रीमद्भगवद्गीतायाम् उपनिषत्सु च तत्र शिष्याः गुरोः समीपे स्वमतमुपस्थापनेन शंकान् निराकृतवन्तः। कठोपनिषदि तु नचिकेता साक्षात् मृत्योः यमराजस्य वा सम्मुखे स्वतर्कं स्थापितवान्। एवं बृहदारण्यकोपनिषदि अपि बालाकिः अजातशत्रुं परितःब्रह्मविषयकं स्वज्ञानमुस्थापितवान्।

एवं स्त्रीणामपि वाक्स्वाधीनतायाः प्रमाणं गार्गी-याज्ञवल्क्यसंवादप्रभृतिभिः ज्ञातुं शक्नुमः। एवं गुरोः साक्षात् शिष्यस्य, समाजे नारीणां, वर्णभेदे सामाजिकविषये स्वमतोपस्थापनस्वतन्त्रतयाः अवसरः कीदृशः आसीदिति अस्मिन् शोधपत्रे मुख्योपनिषद्दिशा अध्ययनमिष्यते।

78

लिङ्गसमानतामधिकृत्य प्राचीनभारतीयवाङ्मयोपपादितभिन्नलिङ्गिन आदाय समीक्षात्मकमध्ययनम्

नम्यलक्ष्मी आर.

छात्रा, श्री शंकर महाविद्यालय, कलाडी, केरल

namyalakshmi@gmail.com

जन्मना जनाः लिङ्गत्वेन द्विधा विभक्ताः–पुंस्त्री चेति। किन्तु भाषायां शब्दाः त्रिधा एव विभक्ताः–पुंल्लिंगः, स्त्रीलिंगः, नपुंसकलिंगश्चेति। जीविनां विषये विशिष्य मानवानां विषये प्रायेण तृतीयलिंगाय प्राधान्यं न दत्तमासीत्। किन्तु अस्मिन् कालखण्डे नपुंसकलिंगीयाः जनाः अपि समाजस्य मुख्यधारामावहन्ति। ते तु भिन्नलिंगाः इति समाजे व्यवह्रियन्ते। भारतीयसर्वकारेणापि भिन्नलिंगानां कृते सविशेषश्रद्धा दीयते। इतरलिंगयोरिव नागरिकाधिकारे, धार्मिकदायित्वे, सामाजिकव्यवहारे च भिन्नलिंगाः समाः भवेयुरिति सर्वकारेण 2019 तमे वर्षे जनसंसदि विधेयकं किञ्चित् अनुमोदितं भारतीयराजपत्रद्वारा विज्ञापितं च। अत्र तु भारतस्य पौराणिकग्रन्थेषु भिन्नलिंगाः कथं व्यवह्रताः, समाजे तेषां स्थानं, समाजपरिष्करणे तेषां योगदानं दायित्वञ्च अवलोकयितुं यत्नः क्रियते। महानिर्वाणतन्त्रं [12–104], कामसूत्रं [2–9–36], सुश्रुतसंहिता [3–2–42], नारदस्मृतिः इत्यादिषु ग्रन्थेषु तृतीयलिंगीयानां परामर्शाः दृश्यन्ते। पुरातनग्रन्थेषु ते तृतीयप्रकृतिरिति कथ्यन्ते। पुराणेतिहासादिग्रन्थेषु दृश्यमानानि अर्धनारीश्वरपरिकल्पनं, देवतानां लिङ्गपरिवर्तनकथाः, परिवर्तितलिङ्गानां देवतानामाराधनम् इत्यादीनि जनेषु तृतीयलिङ्गीयानां स्थानं ज्ञापयन्ति। अरावणोत्सवः [कूवग्रामः तमिलनाटु], बहुचरमतं [गुजरात्], येल्लम्मा [करणाटकं], चमयविलक्क् [कोल्लं केरलं], इत्यादयः देवताराधनक्रमाः उदाहरणत्वेन वक्तुं शक्यते। महाभारते अर्जुनस्य बृहन्नलेति तृतीयलिंगपरिणामः, तत्रैव विद्यमानः शिखण्डिः, पुराणप्रसिद्धः मोहिनीवेषः इत्यादिभिः उपाख्यानैः पुरातनभारतीयेषु तृतीयलिङ्गस्य प्रभावः स्पष्टीक्रियते।

79

यत्र विश्वं भवत्यैकनीडम्

डॉ. पराम्बा श्रीयोगमाया

सहायकाचार्या, स्नातकोत्तरवेदविभागः, श्रीजगन्नाथसंस्कृतविभागः, श्रीविहारः, पुरी

parambasam@gmail.com

देशस्य विश्वस्य च प्रसङ्गे वैषम्यस्यासहनशीलतायाश्च प्रादुर्भावो राष्ट्रस्य विश्वस्य वाभ्यन्तरावस्थां तथा बाह्यावस्थां कबलीकरोति। अपरपक्षे महतो देशस्यास्य विपुलः शास्त्रनिधिः सन्मार्गप्रदर्शनाय सर्वदोन्मुक्त उन्मुखश्च। परन्तु यावत् पर्यन्तं सः शेवधिर्जनमानसे चेतनां न जागरयति तावन्न किञ्चिदिभन्नं प्रभविष्यति। विश्वस्यैकीकरणं न केवलं शिल्पवाणिज्यकूटनैतिकसम्पर्केष्वपितु भावगतौदार्यापादने निहितमस्ति। समुत्तरितचेतनाया उपलब्धनिधेर्वेदराशेर्राष्ट्रभावनायुतमन्त्रेषु वसुधैव कुटुम्बकमित्याशयस्य भित्तिरूपेण या सूक्तिर्यजुर्वेदे (32.8) तथाथर्ववेदे (2.1.1) प्राप्यते सा सूक्तिसम्पुटितस्य मन्त्रस्य विनियोगो मूलतो यद्यप्याध्यात्मपरकस्तथापि व्यवहारदृशा कथं साम्प्रतिके विश्वेऽस्याः सूक्तेरुपयोगः स्यादिति पूर्वापरसंयोगमभिलषते। वैदिकसूक्तेषु कथं वैश्विकरणभावना भावगतस्तरे विद्यते इति मनोविज्ञानपक्षमाधृत्य भावैकत्वं संवेगैकत्वञ्च समधिकभावेन विश्वस्य राष्ट्रस्य वा समृद्धपथ इति पक्षोपस्थपनायास्मिन् पत्रे चेष्टामात्रं क्रियते।

80

वैदिकसंहितासु मैत्रीभावना

श्रिप्रा राय

अध्यापिका, संस्कृतविभागः, त्रिपुरा विश्वविद्यालयः

sipraray@tripurauniv.in

भारतीयसंस्कृतेराधारं वैदिकसंहिता। चत्वारो हि वेदाः, ऋग्–यजुः सामाथर्वभेदात्। वेदस्यैव अपरं नाम संहिता इति। वैदिकसंहितासु मैत्रीभावनाविषये बहूनि तथ्यानि निहितानि सन्ति। मैत्रीबोधस्य भावना अस्माकं भारतीयसंस्कृतौ उपस्थापिता वर्तते। मैत्रीबोधस्य भावना अस्मदीयानां भारतीयानां मनसि निहिता वर्तते। संस्कृतसाहित्येषु बहुषु स्थलेषु मैत्रीबोधस्य भावना

परिलक्ष्यते। हितोपदेशे समग्रं विश्वम् एकं कुटुम्बकं स्वीकृतं यथा–*अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।* वैदिकसंहितासु विश्वकल्याणं, सर्वेषां नराणां हितकामना, मैत्रीबोधस्य भावना च परिलक्ष्यते। मैत्रीबोधस्य प्रयोजनं सर्वेषु कालेषु समानतया समुपयोगि भवति। वैदिकऋषयः जगतः कल्याणार्थं मैत्रीभावनाविषयकानि बहूनि सूक्तानि प्रोक्तवन्तः।शोधप्रबन्धेऽस्मिन् मया संक्षेपेण 'वैदिकसंहितासु मैत्रीभावना' इति विषयमधिकृत्य आलोचितम्।

❖—❖—❖

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः। –वा.सं. ९.२३
Vayaṃ rāṣ re jāgṛyāma purohitāḥ.
हम सब अपने राष्ट्र में आगे स्थित होकर जागते रहें।
May we standing in front, keep waking in our nation.

मा गृधः कस्यस्विद् धनम्। –ईशा. १
Mā gṛdhaḥ kasyasvid dhanam.
किसी के भी धन का लोभ मत करो।
Do not covet the wealth of anyone.

धर्मं चर। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। –तैत्ति. १.११
Dharmaṃ cara. Dharmānna pramaditavyam.
धर्म का आचरण करो। धर्म से कभी नहीं डिगना चाहिए।
Practise righteousness (Dharma). Do not swerve from righteousness (Dharma).

A brief Introduction of Central Sanskrit University, Shri Raghunatha Kirti Campus, Devprayag, Uttarakhand

Shri Raghunatha Kirti Campus, Devaprayaga was established on 16th June, 2016 as the 12th constituent Campus of Central Sanskrit University **(**Formerly Rashtriya Sanskrit Sansthan). The campus is named after the famous ancient deity Shri Raghunathaji shrined in the ancient Raghunatha temple constructed in the Katyuri style of Katyuri dynasty of the mountains on the holy confluence of two mythological rivers, namely, Bhagirathi and Alakananda from where exactly the river Ganga is originated and recognised as the first prayaga among the five prayagas of Uttarakhand.

The campus has total 23 acres of land and functional with five departments where traditional subjects like Vyakarana, Jyotisha, Sahitya, Veda and Nyaya are taught along with the modern Subjects like Hindi, English, History, computer Science etc. (upto graduation or Shastri level). The campus offers regular courses like Prak-Shastri (Intermediate), Shastri (B.A.), Acharya (M.A.) and Vidyavaridhi (Ph.D.) at present. Some of these courses run in distance mode also through its Mukta-svadhyaya-pitham.

The Campus publishes Research journals and periodicals like Raghunatha-kirtipataka (Annual Magazine), Raghunatha-vartavali (quarterly Newsletter) along with the departmental journals, namely, Shabdi-tripathaga (Vyakarana), Sahiti (Sahitya), Amnaya-haimavati (Veda), Daivi (Jyotisha), Adhunika-shodha-triveni (Modern) and Nyayashastrartha-prakarsha (Nyaya).

The campus has well-equipped library, computer-lab and functional Resource Centre of Modern Sanskrit Literature, Resource Centre of Manuscripts and Resource Centre of Buddhist Sanskrit Literature. Campus organises several International and National Seminars, workshops and all India Multi-lingual-Poetry-symposium etc. both online and offline.

Prof. Banamali Biswal
Central Sanskrit University,
Shri Raghunath Kirti Campus,
Devaprayag, Paudi Garhwal,
Uttarakhand-249301

A Brief Introduction of 'WAVES'
Wider Association for Vedic Studies (Regd.)

WAVES (Wider Association for Vedic Studies (Regd.), formerly known as "World Association for Vedic Studies (WAVES), India Branch", is a forum for all scholarly activities and views on any area of 'Vedic Studies' variously called Indian Studies, South Asian Studies or Indology. WAVES is not confined to study related to Vedas alone or to India alone. It encompasses all that applies to traditions commonly called Vedic tradition of past, present and Future, anywhere in the world.

This organization was established at Atlanta, USA in 1996 by a group of academics interested in Vedic knowledge under the chairman-ship of Prof. Bhu Dev Sharma. It is a non-religious society with no rigid ideology. Its membership is open to all without any discrimination. Today, Vedic traditions are not confined to Indian subcontinent but have spread virtually to all parts of the globe, through persons of Indian origin and through scholars and admirers of these traditions. For several centuries Vedic people in India made significant contributions in various academic fields-science, literature, culture, technology, etc. For most of the world, these contributions are unknown, unrecognized, and sometimes rather distorted. There is a need, particularly among scholars to work for the proper understanding and appreciation of such religious, cultural and other contributions.

The general purposes for which the Society is formed are as follows: To promote Vedic and ancient Indian studies in all its forms and in all countries; To conduct multi-disciplinary activities for research and study of Vedic traditions; To support researches and studies in various Vedic sub-specialties, Sanskrit, other Indian languages and contemporary works; To encourage research in developing all aspects of Vedic and ancient Indian traditions; and To promote universal, intellectual, ethical traditions enshrined in Vedas and other works of ancient Indian origin.

WAVES's head office is in Delhi, while its four Chapters are working in Bangalore, Jodhpur ,Lucknow, and Haridwar. WAVES has published eight volumes of edited and selected papers of its National conferences which are edited by Dr. Shashi Tiwari. The books are published from Pratibha Prakashan, Delhi and are available in market. Annual newsletter is another publication of WAVES, India.

Dr Shashi Tiwari
President, WAVES

WAVES कुलगीत

वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा,
वेव्स है माध्यम जिसका न्यारा।।

अपरा से जीवन निखारकर, परा से पाएँ अक्षर-ज्ञान।
सत्यं शिवं सुन्दरं के हम, सिद्ध कर पाएँ सब वरदान।।
यही परम उद्देश्य हमारा, वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा।।
वेव्स है माध्यम जिसका न्यारा।।

वेव्स दे रहा बोध-तरंगें, भारत की विद्या पहचानें।
वेद-पुराण-स्मृति-ग्रंथों में निहित अमूल्य सार हम जानें।।
तत्त्वज्ञान ही बोध्य हमारा, वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा।।
वेव्स है माध्यम जिसका न्यारा।।

दशकों से है वेव्स दे रहा, अवसर चर्चा का, चिंतन का।।
एक मंच पर सबको लाना, ध्येय रहा हर सम्मेलन का।।
वैश्विक-हित कर्तव्य हमारा, वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा।।
वेव्स है माध्यम जिसका न्यारा।।

ऋतंभरा प्रज्ञा से युत हों, भ्रमजालों से दूर बचें हम।
स्वस्ति भावपूरित जीवन हो, अनृत-मार्ग से दूर रहें हम।।
चिदानंद गंतव्य हमारा, वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा।।
वेदाध्ययन है लक्ष्य हमारा,
वेव्स है माध्यम जिसका न्यारा।।

लेखिका द्वयः– **डॉ. प्रवेश सक्सेना, डॉ. शशि तिवारी**

WAVES, India
(www.waves-india.com)

Wider Association for Vedic Studies (WAVES) is a Multi-Disciplinary Academic Society, registered under Societies Registration Act, XXI of 1860. Association maintains its acronym 'WAVES' and is an affiliate of 'World Association for Vedic Studies, USA'. Presently WAVES has 300 members registered as Life Members with its six chapters in different parts of India. It has organized 24 annual conferences in Delhi or different parts of India mostly in association with any University or academic Institute. One such conference was organized in Nepal. The 25th India Conference of WAVES would be jointly organized with CSU, SRK Campus, Devprayag in 2021.

CSU, SRK Campus
(http://csu-devprayag.edu.in/)

Shri Raghunatha Kirti Campus, Devprayag (established on 16th June, 2016) is the 12th constituent Campus of Central Sanskrit University (Formerly Rashtriya Sanskrit Sansthan). The campus has total 23 acres of land and functional with five departments where traditional subjects like Vyakarana, Jyotisha, Sahitya, Veda and Nyaya are taught through regular/distance mode courses like Prak-Shastri, Shastri, Acharya and Vidyavaridhi (Ph.D). The Campus publishes several Research journals and periodicals regularly. The campus has well-equipped library, computer-lab and functional Resource Centre of Modern Sanskrit Literature, Resource Centre of Manuscripts and Resource Centre of Buddhist Sanskrit Literature. Campus organizes International/National Seminars/Workshops/Poetry-symposium etc. both online and offline.